अंक : 2, दिसम्बर 2011

LEISA INDIA

लीज़ा इण्डिया

हिन्दी विशेषांक

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण
दिसम्बर 2011, अंक 2

यह अंक लीज़ा इण्डिया टीम के साथ मिलकर जी०ई०ए०जी० के द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है, जिसमें लीज़ा इण्डिया में प्रकाशित अंग्रेजी भाषा के कुछ मूल लेखों का हिन्दी में अनुवाद एवं संकलन है।

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप
224, पुर्दिलपुर, एम०जी० कालेज रोड,
पोस्ट बाक्स 60, गोरखपुर- 273001
फोन : +91-551-2230004, फैक्स : +91-551-2230005
ईमेल : geag_india@yahoo.com
वेबसाइट : www.geagindia.org

ए.एम.ई. फाउण्डेशन
नं० 204, 100 फीट रिंग रोड, 3rd फेज़, 2nd ब्लाक, 3rd स्टेज,
बनशंकरी, बैंग्लोर- 560085, भारत
फोन : +91-080-26699512, +91-080-26699522
फैक्स :+91-080-26699410,
ईमेल : amebang@giasbg01.vsnl.net.in

लीज़ा इण्डिया
लीज़ा इण्डिया अंग्रेजी में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका है जो इलिया की सहभागिता से ए.एम.ई. फाउण्डेशन बैंग्लोर द्वारा प्रकाशित होती है।

मुख्य सम्पादक : के.वी.एस. प्रसाद, ए.एम.ई. फाउण्डेशन
प्रबन्ध सम्पादक : टी.एम.राधा., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

अनुवाद समन्वय
अर्चना श्रीवास्तव, जी.ई.ए.जी.
अरूण कुमार शिवाराय, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्धन
एम० शोभा मइया, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

लेआउट एवं टाईपसेटिंग
राजकान्ती गुप्ता, जी.ई.ए.जी.

छपाई
कस्तूरी ऑफसेट, गोरखपुर

आवरण फोटो
राजेश गुप्ता, जी.ई.ए.जी.

लीज़ा पत्रिका के अन्य सम्पादन
लैटिन, अमेरिकन, इण्डोनेशियन, पश्चिमी अफ्रीकन,
ब्राज़ीलियन एवं चाइनीज़ संस्करण

लीज़ा इण्डिया पत्रिका के अन्य क्षेत्रीय सम्पादन
तमिल, कन्नड़, उड़िया एवं तेलगू

सम्पादक की ओर से लेखों में प्रकाशित जानकारी के प्रति पूरी सावधानी बरती गई है, फिर भी दी गई जानकारी से सम्बन्धित किसी भी त्रुटि की जिम्मेदारी उस लेख के लेखक की होगी।

माइजेरियर के सहयोग एवं जी०ई०ए०जी० के समन्वयन में ए०एम०ई० द्वारा प्रकाशित

प्रिय पाठक

आपके समक्ष लीज़ा के हिन्दी अनुवाद का दिसम्बर 2011 अंक प्रस्तुत है। आपके उत्साहवर्धक सहयोग के लिए धन्यवाद। यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि जर्मनी की एक दाता संस्था 'माइजेरियर' इस गतिविधि को 2011–13 की अवधि के लिए सहयोग प्रदान करने पर सहमत हो गई है। इस सहयोग के साथ हम अधिकाधिक पाठकों और जमीन से जुड़ कर काम करने वाली संगठनों तक अपनी पहुँच बनाना चाहते हैं। पारिस्थितिकी कृषि में रूचि रखने वाले लोगों या संस्थाओं तक पहुँचने में मदद करें। हमें यह पत्रिका प्रेषित करते हुए अत्यन्त प्रसन्नता है। कृपया पत्रिका के साथ संलग्न फार्म को भरकर हमें वापस भेजें।

हमें यह बताते हुए प्रसन्नता है कि हिन्दी अंक को अधिक प्रशंसा मिल रही है। स्थानीय भाषा में होने के कारण बहुत से पाठक इसे अच्छे ढंग से समझ पा रहे हैं। हमें मूल लेखों के लिए भी सकारात्मक प्रतिक्रिया मिल रही है।

इस अंक में विभिन्न विषयों जैसे स्थानीय संस्थानों की मजबूती, खाद्य सम्प्रभुता, स्थानीय संसाधनों का संरक्षण व प्रबन्धन, विविधीकृत खेती की वर्तमान में आवश्यकता एवं स्थानीय संसाधनों से बाढ़ का मुकाबला करने की विधि आदि को शामिल किया है। आशा है कि इसे पढ़कर आपको प्रसन्नता होगी। पत्रिका हेतु आपके सुझावों का स्वागत है।

लीज़ा इण्डिया टीम
दिसम्बर, 2011

लीज़ा

कम बाहरी लागत एवं स्थायी कृषि पर आधारित लीज़ा उन सभी किसानों के लिए एक तकनीकी और सामाजिक विकल्प है, जो पर्यावरण सम्मत विधि से अपना उत्पादन और आय बढ़ाना चाहते हैं क्योंकि लीज़ा के अन्तर्गत मुख्यतः स्थानीय संसाधनों और पारम्परिक तरीकों को अपनाया जाता है और आवश्यकतानुसार ही वाह्य संसाधनों का सुरक्षित उपयोग किया जाता है।

लीज़ा पारम्परिक और वैज्ञानिक ज्ञान का संयोग है जो विकास के लिए आवश्यक पृष्ठभूमि तैयार करती है। यह भी ध्यातव्य है कि इसके द्वारा किसानों की क्षमता को विभिन्न तकनीकों से मजबूत किया जाता है और खेती को बदलती जरूरतों और स्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है, साथ ही उन महिला एवं पुरुष किसानों व समुदायों का सशक्तिकरण होता है, जो अपने ज्ञान, तकनीकों, मूल्यों, संस्कृति और संस्थानों के आधार पर अपना भविष्य बनाना चाहते हैं।

लघु किसानों के लिए वित्त प्रबन्धन का एक अभिनव तरीका 5

एल0एच0 मंजूनाथ

किसान को ऋण की आवश्यकता विभिन्न आवष्यकताओं के लिए होती है, लेकिन समय से ऋण अदायगी न होने के कारण उन्हें पुनः ऋण उपलब्ध न हो पाने का एक महत्वपूर्ण कारण है। 'प्रगतिबन्धु' एक ऐसा अभिनव कार्यक्रम है, जो विविधतापूर्ण आय स्रोतों और श्रम साझेदारी की सुविधा के माध्यम से गरीब लोगों को आर्थिक रूप से समर्थ बनाती है।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन, दक्कन के अर्द्धशुष्क क्षेत्र के लघु सीमान्त किसानों के मध्य विकास एजेन्सियों के जुड़ाव, अनुभव के प्रसार, ज्ञानवर्द्धन एवं विभिन्न कृषि विकल्पों की उत्पत्ति द्वारा पर्यावरणीय कृषि को प्रोत्साहित करता है। यह कम लागत द्वारा प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन के लिए पारम्परिक ज्ञान व नवीन तकनीकों के सम्मिश्रण से आजीविका स्थाईत्व को बढ़ावा देता है। ए.एम.ई. फाउण्डेशन गाँव में इच्छुक किसानों के समूह को वैकल्पिक कृषि पद्धति तैयार करने व अपनाने में सक्षम बनाने हेतु उनके साथ जुड़कर सघन रूप से काम कर रही है। यह स्थानीय अभ्यासकर्ताओं व प्रोत्साहकों के लिए उनकी देखने–समझने की क्षमता में वृद्धि करने हेतु सीखने की परिस्थिति के तौर पर है। इससे जुड़ी स्वयं सेवी संस्थाओं और उनके नेटवर्क को जानने के लिए इसकी वेबसाईट www.amefound.org देखें।

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप एक स्वैच्छिक संगठन है, जो स्थाई विकास और पर्यावरण से जुड़े मुददों पर सन् 1975 से काम कर रही है। संस्था लघु एवं सीमान्त किसानों, आजीविका से जुड़े सवालों, पर्यावरणीय संतुलन, लैंगिक समानता तथा सहभागी प्रयास के सिद्वान्तों पर सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। संस्था ने अपने 30 साल के लम्बे सफर के दौरान अनेक मूल्यांकनों, अध्ययनों तथा महत्वपूर्ण शोधों को संचालित किया है। इसके अलावा आजीविका और स्थाई विकास से सम्बन्धित मुददों पर अनेक संस्थाओं, महिला किसानों तथा सरकारी विभागों का क्षमतावर्धन भी किया है। आज जी0ई0ए0जी0 ने स्थाई कृषि, सहभागी प्रयास तथा लिंग भेद जैसे विषयों पर पूरे उत्तर भारत में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है।

माइजेरियर वर्ष 1958 में स्थापित जर्मन कैथोलिक बिशप की संस्था है, जिसका गठन विकासात्मक सहयोग के लिए हुआ था। पिछले 50 वर्षों से माइजेरियर अफ्रीका, एशिया और लातिन अमेरिका में गरीबी के विरूद्ध लड़ने के लिए प्रतिबद्ध है। जाति, धर्म व लिंग भेद से परे किसी भी मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यह हमेशा तत्पर है। माइजेरियर गरीबी और हानियों के विरूद्ध पहल करने के लिए प्रेरित करने में विश्वास रखता है। यह अपने स्थानीय सहयोगियों, चर्च आधारित संगठनों, गैर सरकारी संगठनों, सामाजिक आन्दोलनों और शोध संस्थानों के साथ काम करने को प्राथमिकता देता है। लाभार्थियों और सहयोगी संस्थाओं को एक साथ लेकर यह स्थानीय विकासात्मक क्रियाओं को साकार करने और परियोजनाओं को क्रियान्वित करने में सहयोग करता है। स्थिर चुनौतियों की प्रतिक्रिया में 'माइजेरियर' किस प्रकार अपनी सहयोगी संस्थाओं के साथ काम कर रहा है, यह जानने के लिए इसकी वेबसाइट www.misereor.de; www.misereor.org देखें।

सफल वृक्षारोपण से पारम्परिक कृषि–वानिकी का पुनर्जीवन 7

अरूण के शर्मा

यह लेख किसानों की पारम्परिक / देशी प्रजातियों की पहचान, खेतों के निकट ही पौधों की नर्सरी स्थापित करने, समयबद्ध संचालन व सुरक्षा के उपायों की शर्त पर स्वामित्व की साझेदारी को सशक्त करने पर आधारित है। स्थानीय कृषक समूहों के सहयोग से केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान द्वारा राजस्थान में पारम्परिक कृषि वानिकी तंत्र को पुनर्जीवित करने का यह प्रयास किया गया।

खाद्य सुरक्षा एवं सम्प्रभुता पर महिलाओं का नियंत्रण 10

नरेश जाधव और पल्लवी सोबती–राजपाल

समुदाय के मुद्दों और परिप्रेक्ष्य को समझकर उनके विचारों को मूर्त रूप प्रदान करना एवं संगठित होने हेतु उत्प्रेरित करना एक स्थाई व उचित परिवर्तन की कुंजी है। जेण्डर में सकारात्मक बदलाव लाने एवं उन्हें सशक्त करने के केन्द्र में ''उत्थान'' द्वारा किये गये प्रयास प्रभावी हैं।

मूल्य संवर्द्धन : बेहतर आमदनी का सूत्र 14

उत्कर्ष घाटे

समुदाय आधारित संगठनों के स्वशासित स्थायी मॉडल छोटे किसानों के लिए नये अवसरों की रचना करते हैं और ग्रामीण उद्योगों को बढ़ाने तथा ग्रामीण आय को स्थाइत्व प्रदान करने में अहम होते हैं। सी0सी0डी0 द्वारा किये गये इस अभिनव पहल ने ग्रामीणों की भोजन, स्वास्थ्य, ऊर्जा और रोजगार की मांग को पूरा करने के साथ ही ग्राम्य उत्पादों के लिए बाजार पर पहुंच भी बनाई।

वैश्विक तापमान न्यूनीकरण के साथ स्थाई आजीविका 16

नारायण जी हेगड़े

पशुपालन खेती का समग्रित भाग होते हुए भी आज उपेक्षित है जबकि छोटे किसानों की आजीविका का यह एक महत्वपूर्ण स्रोत है। अनेक शोधों एवं अनुभवों से यह सिद्ध हो चुका है कि छोटे जानवरों जैसे बकरी आदि का रख–रखाव ठीक ढंग से करते हुए न केवल अपनी आजीविका सुरक्षित की जा सकती है वरन् वैश्विक तापमान न्यूनीकरण में भी उल्लेखनीय योगदान दिया जा सकता हैं।

पारम्परिक जलस्रोतों को समुदाय ने दिया पुनर्जीवन 18

रोकश प्रसाद

बजीना गांव की महिलाओं ने जलस्रोतों का प्रबन्धन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। समुदाय ने यह महसूस किया है कि टेरी के सहयोग से लोगों ने न केवल पेयजल तक अपनी पहुँच बढ़ाई है, वरन् लोगों के अन्दर जल स्रोतों के प्रबन्धन की जानकारी एवं क्षमता स्तर में भी वृद्धि हुई है।

अनुक्रमणिका

हिन्दी संस्करण, दिसम्बर 2011

5 **लघु किसानों के लिए वित्त प्रबन्धन का अभिनव तरीका**
एल0एच0 मंजूनाथ

7 **सफल वृक्षारोपण से पारम्परिक कृषि वानिकी का पुनर्जीवन**
अरूण के शर्मा

10 **खाद्य सुरक्षा एवं सम्प्रभुता पर महिलाओं का नियंत्रण**
नरेश जाधव और पल्लवी सोबती–राजपाल

13 **विविधीकृत खेती पद्धति**
एल. नारायण रेड्डी

14 **मूल्य संवर्द्धन : बेहतर आमदनी का सूत्र**
उत्कर्ष घाटे

16 **वैश्विक तापमान न्यूनीकरण के साथ स्थाई आजीविका**
नारायण जी हेगड़े

18 **समुदाय द्वारा पारम्परिक जल स्रोतों का पुनर्जीवन**
राकेश प्रसाद

20 **छोटे स्तर पर जल संसाधनों का प्रबन्धन**
आर0सी0 कोटे एवं एस0एम0 वागले

छोटे स्तर पर जल संसाधनों का प्रबन्धन 20

आर0सी0 कोटे एवं एस0एम0 वागले

स्थानीय समाधानों की पहचान करने में वहाँ रह रहे लोगों को शामिल करना स्थानीय जल सम्बन्धित समस्याओं के समाधान का एक बेहतर तरीका हो सकता है। ''मित्रा'' के अनुभव एक ऐसा ही उदाहरण है जहाँ समुदायों ने जल स्रोतों को विकसित करने का काम किया है और उनका बेहतर प्रबन्धन भी किया।

यह अंक...

हिन्दी में अनुवादित लीज़ा इण्डिया का प्रस्तुत अंक जलवायु परिवर्तन के कारण हो रहे नुकसान से निपटने के उपायों पर आधारित है। वस्तुतः जब खेती में हर समय जलवायु के कारण बदलाव करना पड़ रहा है, उस स्थिति में भारत जैसे विकासशील व विशाल देश में उसके लघु, सीमान्त किसानों द्वारा किये जा रहे विभिन्न प्रयास ऐसे परिप्रेक्ष्य में प्रभावी हो सकते हैं। घर से लेकर खेत तक, गांव से लेकर बाजार तक किये जाने वाले ये प्रयास किसान की विविधितापूर्ण सोच एवं परिश्रमी स्वभाव को दर्शाता है, साथ ही यह भी प्रदर्शित करता है कि भारत का आधार स्तम्भ कृषि अपने अस्तित्व के प्रति कितना चिन्तनशील है।

श्री एल0एच0 मंजूनाथ द्वारा लिखित इस अंक का पहला लेख ''लघु किसानों के वित्त प्रबन्धन का एक अभिनव तरीका'' किसानों द्वारा गठित स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से खेती में किये जा रहे अभिनव प्रयासों को दर्शाता है, तो श्री अरूण के शर्मा द्वारा लिखित लेख ''सफल वृक्षारोपण से पारम्परिक कृषि–वानिकी का पुनर्जीवन'' में खेती के साथ वानिकी को समाहित करने की वकालत की गयी है। प्राकृतिक संसाधनों के अन्धाधुन्ध दोहन, कृषि पर बाजार के बढ़ते प्रभाव एवं उसके कारण महिलाओं के ऊपर पड़ने वाले प्रभावों के सापेक्ष महिलाओं द्वारा अपनी एवं परिवार की खाद्य सुरक्षा के लिए किये जा रहे सद्प्रयासों पर आधारित लेख '' खाद्य सुरक्षा एवं सम्प्रभुता पर महिलाओं का नियन्त्रण'' में श्री नरेश जाधव, पल्लवी सोबती–राजपाल ने राजस्थान की परम्परागत आदिवासी समुदायों के प्रयासों को प्रस्तुत किया है, जबकि ''विविधीकृत खेती पद्धति'' में श्री नारायण रेड्डी ने एकल खेती के नुकसान एवं खेती में विविधिता अपनाने के फायदों को अपने अनुभवों द्वारा अवगत कराया है। श्री उत्कर्ष घाटे ने अपने लेख ''मूल्य सम्वर्धन :: बेहतर आमदनी का सूत्र'' में किसानों को बाजार से जोड़ने एवं तद्नुरूप प्रक्रिया अपनाने पर जोर दिया है तो वहीं दूसरी ओर श्री नारायण जी0 हेगड़े ने अपने लेख में वैश्विक तापमान में कमी लाने के साथ–साथ सुरक्षित आजीविका उपलब्ध कराने हेतु विभिन्न राज्यों में बाएफ द्वारा किये जा रहे सफल प्रयासों का विवेचन किया है।

अन्तिम दो लेख क्रमशः श्री राकेश प्रसाद लिखित ''समुदाय द्वारा पारम्परिक जलस्रोतों का पुनर्जीवन'' एवं आर0सी0 कोटे व एस0एम0 वागले का लेख '' छोटे स्तर पर जल संसाधनों का प्रबन्धन'' में समुदाय द्वारा जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से प्रत्यक्षीकरण एवं उससे निपटने हेतु छोटे–छोटे प्रयासों को सामने लाता है। इन दोनों कहानियों में उल्लिखित है कि सिंचाई व पीने के लिए पानी की हो रही किल्लत को देखते हुए लोगों ने छोटे–छोटे समूहों में प्रयास किया और सफलता भी पाई है, जो दूसरों के लिए प्रेरणास्रोत हो सकती है।

अन्त में, पत्रिका के बाहरी एवं भीतरी कलेवर पर इससे जुड़े पाठकों के प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा रहेगी, क्योंकि लेखों, अन्ततः पत्रिका की उपयोगिता के बारे में उन्हीं की राय महत्वपूर्ण होती है।

• सम्पादक मण्डल

लघु किसानों के लिए वित्त प्रबन्धन का एक अभिनव तरीका

किसान को ऋण की आवश्यकता विभिन्न आवश्यकताओं के लिए होती है, लेकिन समय से ऋण अदायगी न होने के कारण उन्हें पुनः ऋण उपलब्ध न हो पाने का एक महत्वपूर्ण कारण है। 'प्रगतिबन्धु' एक ऐसा अभिनव कार्यक्रम है, जो विविधतापूर्ण आय स्रोतों और श्रम साझेदारी की सुविधा के माध्यम से गरीब लोगों को आर्थिक रूप से समर्थ बनाती है।

एल०एच० मंजूनाथ

किसानों द्वारा साथी किसानों के साथ श्रम की साझेदारी

खेती में स्थाईत्व लाने के प्रयासों के तहत् लघु किसानों द्वारा वित्तीय अभावों से जूझने की समस्या कोई नई नहीं है। किसानों को फसल उगाने, जानवर खरीदने, पेड़ और पौधों की नर्सरी उगाने, जल संरक्षण गतिविधियों आदि को करने के लिए पैसे की आवश्यकता होती है। लेकिन, समय पर ऋण न मिलने के कारण ये किसान अपनी छोटी जोत से पूर्व ऋण की अधिकतम वापसी करने में असमर्थ हो जाते हैं।

लघु किसानों की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए 'श्री क्षेत्र धर्मस्थल ग्राम्य विकास परियोजना' द्वारा 'प्रगतिबन्धु' नामक एक अभिनव कार्यक्रम की शुरूआत की गयी। श्री क्षेत्र धर्मस्थल ग्राम्य विकास परियोजना कर्नाटक राज्य के धर्मशाला में लघु किसानों के साथ स्वयं सहायता समूह एवं छोटे किसानों का संघ बनाकर कार्य करने वाली एक संस्था है। ''प्रगतिबन्धु'' के नाम से प्रचलित ये समूह कृषिगत गतिविधियों को उन्नत बनाने, एक–दूसरे के साथ श्रम की साझेदारी और ऋण सुविधा तक पहुंच बनाने के कामों में संलग्न हैं।

वर्ष 1982 में, धर्मशाला के आस–पास के गांवों में छोटे किसानों को मन्दिर बनाने के लिए छूट उपलब्ध कराने के तौर पर सामने आयी ''श्री क्षेत्र धर्मस्थल ग्राम्य विकास परियोजना'' आज वर्तमान में देश की बड़ी स्वैच्छिक संगठनों में एक है। पिछले कुछ वर्षों से संस्था ने लघु किसानों और महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों को प्रोत्साहित करना प्रारम्भ किया है।

प्रगतिबन्धु समूह

5–8 ऐसे लोगों को मिलाकर प्रगतिबन्धु समूह का गठन किया गया, जिनमें से प्रत्येक के पास 2 हेक्टेयर तक की जमीन हो और जो कमोबेश एक जैसी पृष्ठभूमि से सम्बद्ध हों। प्रगतिबन्धु समूह का गठन मुख्यतः पुरूष सदस्यों के साथ किया गया, यद्यपि समूह में एक या दो महिला सदस्य भी थीं। सदस्यों को समूह प्रबन्धन, वित्त प्रबन्धन, दस्तावेजी व उन्नत खेती से सम्बन्धित विभिन्न गतिविधियों के ऊपर प्रशिक्षित किया गया। प्रगतिबन्धु के कार्यकर्त्ताओं द्वारा कई अल्प अवधि के प्रशिक्षण कार्यक्रमों को आयोजित कर प्रगतिबन्धु कार्यक्रम को समग्रता प्रदान करने के लिए निरन्तर फालोअप किया गया। साथ ही, किसानों को सशक्त बनाने के लिए माडल फार्मों, कृषि विज्ञान केन्द्रों पर क्षेत्र भ्रमण व विशेषज्ञों के साथ चर्चा आदि भी कराई गयी।

खेत सम्बन्धित गतिविधियों का नियोजन

सदस्यों के खेत की जोत के आकार एवं फसल पद्धति को ध्यान में रखते हुए उनके खेत का नियोजन करने में मदद की गयी। प्रत्येक सदस्य का खेत नियोजन एक–दूसरे से अलग व आय–व्यय के आकलन के साथ किया गया। नियोजन करने के दौरान विभिन्न पहलुओं जैसे निरन्तर आय देने वाली बहुफसली, स्थाई खेती, स्थाई जलापूर्ति एवं अन्य सहायक गतिविधियों को भी उचित महत्व दिया गया। जल संरक्षण, कटाई–मड़ाई और सिंचाई तंत्र के विभिन्न माडलों को भी खेत नियोजन में शामिल किया गया। पूरी योजना को सदस्यों के घर पर रखे गये एक रजिस्टर में अंकित किया गया। खेत नियोजन की इस अच्छी व अर्थपूर्ण तैयारी ने लघु किसानों को एक नया लक्ष्य और केन्द्र बिन्दु प्रदान किया। इसने उन्हें हिम्मत बंधाई कि वे एक सपना देखें और उस सपने को पूरा भी करें।

समग्र कृषि घटक के नाम से सम्बोधित इस समग्रित खेत इकाई माडल को छोटे किसानों के बीच प्रोत्साहित किया गया ताकि वे अपनी छोटी जोत में सघन खेती करते हुए खेत में फसल, पेड़ और कृषि वानिकी को समाहित करें एवं बहु फसली खेती करने हेतु उत्साहित हो सके। एकीकृत खेती इकाई प्रारम्भ करने के तीन वर्षों के भीतर ही महिला/पुरूष किसानों को जैविक उत्पाद के प्रयोग हेतु उत्साहित किया गया और बाहरी लागत तथा निवेश से पूरे तौर पर बचने में सहायता की गयी। बहुउद्देशीय खेती जैसे अनाज,

उत्तर कन्नड़ जनपद के सिरसी तालुक में स्थित गांव जदाली के रहने वाले श्री हनुमन्थप्पा पिछले दो वर्षों से 'श्री क्षेत्र धर्मस्थल ग्राम्य विकास परियोजना' से आसानी से मिलने वाले ऋण एवं अनुदान के कारण एकीकृत खेती कर रहे हैं। आज, उनके 3.75 एकड़ के खेत में 22 तरीके की फसलें मिल रही हैं, साथ में दुग्ध उत्पादन, मछली के तालाब और एक जैविक बाड़ भी है। श्री हनुमन्थप्पा का कहना है कि अपनी स्थाई खेती पद्धति के माध्यम से उन्हें रू0 1.4 लाख की शुद्ध आमदनी हुई है। वह किसी भी प्रकार की कोई रासायनिक खाद का प्रयोग नहीं करते हैं।

सब्ज़ियों की खेती, फलों की खेती, दुग्ध उत्पादन, मुर्गी पालन, मधुमक्खी पालन, रेशम उत्पादन आदि गतिविधियों को भी प्रोत्साहित किया गया, ताकि किसान वर्षभर निरन्तर आमदनी प्राप्त करने में सक्षम हो सकें।

श्रम साझेदारी

श्रम की कमी निश्चित तौर पर छोटे किसानों एवं फसल उत्पादन को प्रभावित कर रही हैं। इस समस्या से निपटने के लिए, सदस्यों के बीच सप्ताह में एक बार श्रम की साझेदारी ' प्रगतिबन्धु' स्वयं सहायता समूह की विशिष्ट विशेषता थी। तय किया गया कि समूह के सदस्य आपस में एक दूसरे के खेत पर बिना किसी मजदूरी के काम करेंगें। काम को पूरा करने और घरों के भ्रमण का दिन पूर्वनिर्धारित होगा। अगले सप्ताह में उसी दिन सभी दूसरे सदस्य के घर जायेंगे। परिणाम के तौर पर, प्रत्येक छोटे किसान को दो माह में पांच से छः मुफ्त श्रम दिवस प्राप्त होगें, जिसका परिणाम यह होगा कि लघु किसान खेती के लिए आवश्यक श्रम बिना कोई मूल्य चुकाये पा सकेंगे।' प्रगतिबन्धु' स्वयं सहायता समूह की श्रम साझेदारी का कार्यक्रम श्रम की कमी की समस्या से जूझ रहे छोटे किसानों के लिए अनोखा समाधान है। इस प्रक्रिया में किसानों के आपसी सम्बन्ध मजबूत होते हैं, वे एक–दूसरे से सीखते हैं और आपदा के समय में एक–दूसरे की सहायता भी करते हैं। आमतौर पर 'प्रगतिबन्धु' के सदस्य काम को दूसरे दिन पर टालने के बजाय उसी दिन 8–9 घण्टे श्रम की साझेदारी कर उसे उसी दिन पूरा कर लेते हैं।

प्रगति बन्धु, विकास निधि वित्त प्रबन्धन की एक अभिनव पहल

संस्था के ऋण निधि ने 'प्रगतिबन्धु' स्वयं सहायता समूह के सदस्यों को खेती के नियोजन के सपने को पूरा करने में मदद की। स्वयं सहायता समूह के सदस्य 10 रू0 प्रति सप्ताह बचाते हैं। उनकी बचत को 40 गुना तक बढ़ाने के लिए संस्था वित्तीय सहायता प्रदान करती है। इसे निधि (कोष) कहते हैं और संस्था इस पैसे को ऋण की तरह नहीं, वरन् एक सम्मान की तरह मानती है। प्रगतिबन्धु कृषि सहित अन्य सभी सम्भव उद्देश्यों के लिए भी उपलब्ध है। जिस समूह ने अपनी बचत के 12 सप्ताहों को सफलता पूर्वक पूरा कर लिया है, वे अब प्रगतिनिधि के लिए उत्प्रेरक हो सकते हैं। प्रारम्भिक ऋण के रूप में रू0 10,000.00 प्रति सदस्य को अनुवर्ती ढंग से दिया जा रहा है। समूह दूसरी बार ऋण तभी ले सकते हैं, जब पहला ऋण चुकता कर दें और यह भी कि दूसरी बार ऋण पिछला ऋण लेने के तीन माह के बाद ही ले सकते हैं। सदस्य, समूह से भी अपनी बचत व उद्देश्य के अनुसार ऋण ले सकते हैं। उदाहरण के तौर पर, एक सदस्य आकस्मिक जरूरत पड़ने पर रू0 25,000.00 या अपनी बचत का 10 गुना तक ऋण ले सकता है। आयजनक गतिविधियों के लिए अपनी बचत का 20 गुना या रू0 50,000.00 तक ले सकता है। कुंआ, पम्पसेट, पाइपलाइन आदि को बनाने के लिए रू0 50,000.00 या अपनी बचत का 20 गुना तक ऋण ले सकता है। समूह से ऋण के लिए आवदेन पत्र सदस्यों के खेत नियोजन एवं आपसी चर्चा के बाद प्राप्त किये जाते हैं। जितने भी आवेदन पत्र आते हैं, उन सभी को विचारार्थ ऋण की संस्तुति के लिए उपसमिति के रूप में गांव स्तर पर स्थापित स्वयं सहायता समूहों के संघ के समक्ष रखा जाता है। उप समिति की संस्तुति के पश्चात् आवेदन पत्र क्षेत्र कार्यकर्त्ता के पास जमा कर दिया जाता है जो इन आवेदन पत्रों को अनुमोदन के लिए उचित अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करता है। सदस्यों को ऋण वापसी के लिए 3 से 5 वर्ष का समय मिलता है। फिर भी, केवल साप्ताहिक किस्त के रूप में पैसा जमा किया जाता है। उदाहरण के तौर पर, एक किसान ने सुपारी की खेती करने के लिए रू0 20,000 उधार लिया, जिसकी वापसी का समय 5 वर्ष था, परन्तु उसने रू0 156.00 की साप्ताहिक किस्त के माध्यम से 156 सप्ताह में ही कर्ज वापस कर दिया। ऋण वापसी के लिए सदस्य पूरक व्यवसायों जैसे दुग्ध उत्पादन, फूलों, पान की खेती या मजदूरी भी करते हैं।

उप्पा समूह को श्रम की साझेदारी पर गर्व

दक्षिण कर्नाटक जनपद के बेलथनगडी तालुक के गांव मोगरू में 11 कार्यशील सदस्यों को लेकर उप्पा प्रगतिबन्धु समूह का गठन 1993 में किया गया। इसके सदस्य प्रत्येक सप्ताह में मंगलवार को श्रम की साझेदारी करते हैं। अपनी स्थापना से लेकर अब तक उप्पा प्रगतिबन्धु समूह ने रू0 8.97 लाख रू0 मूल्य के 8976 श्रम दिवसों की साझेदारी की है। वहुवर्षीय पौध फसलों जैसे सुपारी, नारियल, रबर, कोको को विकसित करने, कुंए की खुदाई, सब्ज़ियों की खेती, खाद की ढुलाई, फसलों की कटाई आदि कुछ ऐसी सामान्य गतिविधियां हैं, जो समूह के सभी सदस्यों द्वारा की जाती हैं। समूह के सभी किसान मंगलोर शहर के बाजार में आपूर्ति करने हेतु सब्ज़ियों की खेती करते हैं, जहां वे अपने उत्पादों का बेहतर मूल्य प्राप्त करते हैं। समूह के बहुत से लोग वैकल्पिक आजीविका के तौर पर दुग्ध उत्पादन का काम भी करते हैं, जिससे उन्हें खेती में प्रयोग हेतु प्रचुर मात्रा में खाद मिलती है और वे अपने खेतों में रसायनिक की जगह जैविक खादों का प्रयोग आसानी से कर पा रहे हैं। समूह की कुल बचत रू0 94,820 है। पिछले 17 वर्षों में समूह के पास ऋण का विस्तार रू0 6,21,000 तक हो गया। सदस्यों के बीच में बंटे इस पैसे का सालाना लेन–देन रू0 17,36,170 है। सभी सदस्य इस बात पर सहमत हैं कि प्रगतिबन्धु स्वयं सहायता समूह श्रम प्रदान करने और समय से वित्तीय व्यवस्था उपलब्ध कराने दोनों स्थितियों में उनके लिए अनुकूल है।

निष्कर्ष

आज, कर्नाटक के 9 जनपदों में 1,16,500 स्वयं सहायता समूहों के साथ काम कर रही संस्था के साथ 12,85,000 परिवार जुड़े हुए हैं और अपनी कुल बचत रू0 258 करोड़ के साथ संस्था कर्नाटक में लगभग 1,75,000 छोटे किसानों को उनकी कृषिगत गतिविधियों को पूरा करने के लिए बिना किसी लिखा–पढ़ी के समय से समुचित मात्रा में ऋण उपलब्ध करा पाने में सक्षम है, जिससे उनका जीवन स्तर उत्तरोत्तर उन्नत हो रहा है। इस अभिनव पहल ने छोटी खेती के वित्तीय प्रबन्धन हेतु एक नयी पद्धति विकसित की है। प्रगतिबन्धु के इस नव पहल से किसानों को उनकी दैनिक आमदनी दिखती है और वे विभिन्न कृषिगत गतिविधियों व उद्योग को करने के लिए उत्साहित होते हैं। ■

अधिशासी निदेशक
श्री क्षेत्र धर्मस्थल ग्राम्य विकास परियोजन
धर्मश्री बिल्डिंग, धर्मस्थल
ब्लेथांगडी तालुक, जिला –दक्षिण कन्नड, कर्नाटक – 574216
ईमेल : ed@skdrdpindia.org, Website : skdrdpindia.org

Finance for Farming
LEISA INDIA, Vol. 12, No.2, Pg. # 23-24, June 2010

सफल वृक्षारोपण से पारम्परिक कृषि–वानिकी का पुनर्जीवन

यह लेख किसानों की पारम्परिक/देशी प्रजातियों की पहचान, खेतों के निकट ही पौधों की नर्सरी स्थापित करने, समयबद्ध संचालन व सुरक्षा के उपायों की शर्त पर स्वामित्व की साझेदारी को सशक्त करने पर आधारित है। स्थानीय कृषक समूहों के सहयोग से केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान द्वारा राजस्थान में पारम्परिक कृषि वानिकी तंत्र को पुनर्जीवित करने का यह प्रयास किया गया।अनुसंधान संस्थान द्वारा राजस्थान में पारम्परिक कृषि वानिकी तंत्र को पुनर्जीवित करने का यह प्रयास किया गया।

अरूण के शर्मा

राजस्थान और उत्तरी–पश्चिमी भारत के लिए सूखा एक सामान्य जलवायुविक परिस्थिति है। सूखा क्षेत्र के नाम से जाना जाने वाले इस पूरे क्षेत्र में वर्षा दर में अत्यधिक उतार–चढ़ाव देखने को मिलता है। 3 करोड़ हेक्टेयर से अधिक का क्षेत्र गर्म–सूखा क्षेत्र के तौर पर चिन्हित है। हजारों वर्षों से इस क्षेत्र में रहने वाले लोगों ने अपनी कृषि पद्धति में हमेशा विद्यमान रहने वाले वृक्षों को समाहित किया है, ताकि निरन्तर पड़ने वाले सूखे के नुकसान को कम कर सकें या उससे बच सकें। विविध क्षेत्रों की अलग–अलग जलवायुविक, वानस्पतिक व सामाजिक–आर्थिक विशेषताओं के चलते, खेतों में उगाने हेतु सूखा सहन करने वाले बहुउपयोगी पेडों व़ झाड़ियों का चयन कर सघन कृषि–वानिकी पद्धति को अपनाया जा रहा है।

कृषि योग्य फसलों के साथ पेड़ों का समन्वयन एक अद्‌भुत संयुक्त सुरक्षित–उत्पादित तंत्र को प्रस्तुत करता है, जिससे पारिस्थितिकी, उत्पादकता, आर्थिक और स्थाईत्व के सिद्धान्तों पर कार्य सम्पन्न सके। ये तंत्र अब सामान्य रूप से कृषि–वानिकी के रूप में सामने आ रहे हैं। क्योंकि सूखा के कारण जब फसल की क्षति हो जाती है, तब भी अधिकांश वृक्ष सूखा सहनीय होने के कारण ईंधन, चारा, फल व अन्य उत्पाद उपलब्ध करा पाने में सक्षम होते हैं। अतः इस क्षेत्र में पेड़ एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। वृक्ष न केवल किसानों की आजीविका को सुरक्षित बनाये रखते हैं, वरन् मृदा व जल संरक्षण, पर्यावरण सुरक्षा, यहां तक कि मृदा की उर्वरता को बढ़ाते हुए सुरक्षित जलवायु को बनाये रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इस पद्धति के एक भाग के तौर पर, वृक्ष संकुल जलावनी लकड़ी, चारा, अल्प मात्रा में इमारती लकड़ी, फल और अन्य बहुत से खाद्य के रूप में अपना योगदान देते हैं। गर्म शुष्क क्षेत्र में कृषि फसलें यदि संभव नहीं तो मुश्किल अवश्य हैं, जबकि बारिश न होने की स्थिति में पेड़ों से निश्चित तौर पर हमें बहुत से आवश्यक उत्पाद एवं सेवाएं प्राप्त हो जाती हैं। बाक्स में दिये गये फसलों / घासों के साथ प्राकृतिक वृक्ष संकुल प्रजातियों का समन्वयन समन्वित खेती के सिद्धान्त का उदाहरण है। तेजी के साथ घटते वनों व पहले से ही कम वनस्पतियों के बावजूद उनके अधिक दोहन का दीर्घकालिक परिणाम यह हो रहा है कि निरन्तर बढ़ रहे मानव एवं जानवरों की संख्या को कम करने के प्रयास का दबाब बना हुआ है। इस बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने में कृषि वानिकी अक्षम दिख रही है। अतः यह तथ्य इन उत्पादित–सुरक्षित तंत्रों के स्थाईत्व पर सवालिया निशान लगा रहे हैं।

सूखाग्रस्त क्षेत्रों के लिए कृषि वृक्ष जीवन के समान हैं –

यह स्थापित हो चुका है कि गर्म शुष्क पर्यावरण में, मृदा व सूक्ष्म जलवायु के सुधार में वृक्ष महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अनुसंधानों में वृक्षों से मृदा आच्छादन के सकारात्मक व नकारात्मक प्रभाव स्पष्ट रूप से बताये जाते हैं। पेड़ के नीचे की मिट्‌टी की अपेक्षाकृत दूर की मिट्‌टी थोड़ी अधिक अम्लीय होती है। जैविक कार्बन अनुपात भी खुले मैदान की तुलना में वृक्षाआच्छादित क्षेत्र में अधिक होती है। उदाहरण स्वरूप शमी और बबूल से आच्छादित क्षेत्र में जैविक कार्बन अनुपात अधिक होती है। सामान्यतः कुल नाइट्रोजन सामग्री और उपलब्ध पी 205 मिट्‌टी की गहराई बढ़ने के साथ घटने लगती है। तथापि ये पोषक तत्व शमी और बबूल से आच्छादित क्षेत्र में अधिकतम मात्रा में पाये जाते हैं और पेड़ विहीन कृषिगत खेतों की मिट्‌टी में इनकी मात्रा बहुत ही कम होती है। एक गर्म शुष्क वातावरणीय पेड़ मृदा की उर्वरता में निम्न माध्यमों से सुधार कर सकते हैं –

- नाइट्रोजन स्थिरीकरण, मिट्‌टी के अन्दर गहराई से पोषक तत्व लेते हुए, पेड़ के सूखे पत्ते आदि गिरकर और सघन पोषक पुर्नचक्रीकरण द्वारा मृदा में उर्वरकता वृद्धि करना।
- जल प्रवाह और मृदा कटान के माध्यम से होने वाली क्षति को घटाना।
- उपरोक्त प्रक्रियाओं की जटिल पारस्परिक क्रियाओं के माध्यम से मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक स्थितियों को संतुलित एवं उन्नत बनाना।

वृक्ष सूक्ष्म जलवायु के पैमाने पर जलवायु संतुलन में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। उच्च गर्मी के दौरान बबूल टोरटिलीज के नीचे हवा के तापमान में 2° सेल्सियस तक की गिरावट दर्ज की गयी है। ठीक इसी प्रकार, यह भी सिद्ध हो चुका है कि उच्च मृदा क्षेत्र में मानसून अवधि के दौरान, पेड़ों के नीचे मृदा का तापमान 16° सेल्सियस तक कम हुआ है और खुले क्षेत्र की स्थितियों की तुलना में 30 सेमी0 की गहराई पर 50° सेल्सियस तक बढ़ा है। ये स्थितियां एक बेहतर मृदा की उष्मीय प्रणाली का द्योतक हैं।

पारम्परिक कृषि वानिकी तंत्र का ह्रास

पानी की कमी एवं खराब मिट्‌टी के कारण सूखा क्षेत्रों में वृक्षों को लगाना एवं उनका संरक्षण एक आसान काम नहीं है। पेड़ों की

संख्या बढ़ाने के लिए किसानों ने एक साधारण तरीका निकाला है। वे अपने खेतों के आस–पास प्राकृतिक रूप से उगे पौधों की देख–रेख एवं सुरक्षा करते हैं। इस प्रक्रिया के बहुत से लाभ हैं। ये प्रजातियां बिना किसी अतिरिक्त पानी के सूखा क्षेत्रों में आसानी से अपनायी जाती हैं जो कि बाद में बहुउद्देशीय होती हैं।

दुर्भाग्य है कि पिछले 4–5 दशकों में, विभिन्न कारणों से, इस प्राकृतिक पुनरोत्पादन को न तो प्रोत्साहित किया जा रहा है और न ही किसी भी तरीके से ये सहायक हो रही हैं जिसके फलस्वरूप, विगत वर्षों में खेती की जमीनों से पेड़ों की सघनता बहुत तेजी से घटती दिख रही है। इस नकारात्मक परिस्थिति के पीछे कुछ और कारण भी हैं– जैसे खेतों में अव्यवस्थित तरीके से उगे वृक्ष ट्रैक्टर व अन्य मशीनों के प्रयोग में बाधक बन रहे थे। अतः पेड़ों को काट दिया गया। ठीक इसी प्रकार, खेती योग्य जमीन बढ़ाने के लिए खराब जमीन, स्थाई चारागाह एवं बंजर जमीनों में उगने वाले पेड़ों को अधिक संख्या में काट दिया गया। इससे स्पष्ट होता है कि पिछले दशकों में भूमि प्रयोग की उपयोगिता पेड़ों की सघनता के मूल्य पर बढ़ाई गयी है। दूसरी तरफ, विभिन्न कारणों जैसे – जल की कमी, प्रतिकूल परिस्थितियों वाली प्रजातियों को प्राथमिकता देने अथवा जैविक हस्तक्षेपों पर बहुत कम ध्यान देने की वजह से इस क्षेत्र में वृक्षारोपण का कार्यक्रम बहुत सफल नहीं हो पाया।

एकीकरण के साथ सफलता

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान ने इस क्षेत्र में पेड़ों की सघनता बढ़ाने के लिए नियमित गतिविधि के रूप में उपयुक्त मार्ग तलाशने की कोशिश की है और इस प्रकार यहां पर स्थाई कृषि वानिकी तंत्र को प्रोत्साहित किया गया। केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान भारतीय कृषि अनुसंधान केन्द्र की ही एक शाखा है, जो 1999 से राजस्थान के बाडमेर जिले के डुण्डा व कवास ब्लाक के गांवों में काम कर रहा है। यह पूरा जनपद अत्यधिक सूखाग्रस्त एवं यहाँ की मिट्टी बलुई है।

पारम्परिक कृषि वानिकी तंत्र को ध्यान में रखते हुए यहां पर कई चरणों में कार्य प्रारम्भ किया गया। सर्वप्रथम एक सर्वेक्षण किया गया, जिससे प्राप्त निष्कर्षों ने उन पारम्परिक तकनीकों की सीमांकन करने में मदद की, जिन्हें बढ़ावा दिया जा सके। जैसे – (क) तालाब की गाद का उपयोग मृदा उर्वरता को उन्नत बनाने के लिए (ख) दीमक नियंत्रण के लिए कैलोट्रापिस प्रोकेरा की पत्तियों का प्रयोग और (ग) सामाजिक परिस्थितियों एवं स्थानिक जलवायुविक परिस्थितियों में उचित प्रयोग के लिए प्राकृतिक पेड़ों की प्रजातियों का चयन एवं उन्हें उगाना।

यहाँ की सामाजिक एवं पारिस्थितिकी स्थितियों में अच्छी तरह से अनुकूलन बिठाने वाली तीन स्थानीय / देशी प्रजातियों – शमी, डीजर्ट टीक और बबूल का चयन वृक्षारोपण के लिए किया गया। चुनी गयी चौथी प्रजाति हरा चारा प्रदान करने वाली विदेशी झाड़ी मोपानी पिछले चार दशकों से शुष्क परिस्थितियों में जांची– परखी जा चुकी हैं। इन प्रजातियों का प्रयोग हरे चारे के रूप में स्थानीय निवासी बहुत दिनों से कर रहे हैं। उदाहरण के तौर पर शमी की पत्तियां चारे के तौर पर इस्तेमाल की जाती हैं और इसकी फली का उपयोग सब्ज़ियों के रूप में होता है। डीजर्ट टीक का उपयोग इमारती लकड़ी के तौर पर होता है। बबूल का प्रयोग गोंद प्राप्त करने, चारे और जलावनी लकड़ी के लिए होता है। महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि किसानों को अपने इस प्रयास का लाभ देखने के लिए बहुत लम्बा समय नहीं लगाना पड़ा, क्योंकि इनमें से कुछ प्रजातियों ने दूसरे वर्ष से ही आर्थिक उत्पादन देना प्रारम्भ कर दिया है। जबकि मृदा और सूक्ष्म जलवायुविक सुधार प्राप्त करने के लिए न्यूनतम 10–15 वर्षों की आवश्यकता होती है।

नर्सरी की स्थापना

कार्यक्रम के लिए वांछित सभी पौधों को एक स्थानीय नर्सरी में उगाया गया, जिसका प्रबन्धन एक किसान द्वारा किया गया। आशा के अनुरूप दूसरे क्षेत्रों से पौध लाने की बजाय इस व्यवस्था में बहुत से लाभ दिखे। क्षेत्रीय किसानों ने अपनी प्राथमिकता के आधार पर अपनी पसन्द की प्रजातियों का चयन किया। इससे बहुत बड़ा लाभ यह हुआ कि सभी का भावनात्मक जुड़ाव बीज अंकुरण के समय से ही बना रहा। इस कार्य से नर्सरी तैयार करने और पौधरोपण के बाद सामाजिक सुरक्षा के रूप में बहुत बड़ी मदद मिली। इस कार्य का महत्वपूर्ण पहलू यह रहा कि, नर्सरी भी एक जैसी परिस्थिति अर्थात् समान मिट्टी, जल एवं मौसम दशा में उगाई गयी और पौधरोपण में क्षति नहीं हुई। किसानों ने अत्यधिक अप्रत्याशित वर्षा को ध्यान में रखते हुए बारिश होने पर भी पौधरोपण किया, जिससे अधिक संख्या में पेड़ों के बने रहने में बहुत मदद मिली।

रूपरेखा परिवर्तन

कम गुणवत्ता वाले पोषक तत्वों की आपूर्ति के साथ ही इन जिलों में मिट्टी की जलधारण क्षमता बहुत अच्छी नहीं है। मृदा गुणों की सम्पन्नता बढ़ाने के लिए संस्थान की प्रयोगशाला में स्थानीय स्तर पर उपलब्ध बहुत सी सामग्रियों के संयोजन की जांच की गयी। इन सभी में से प्राकृतिक मृदा, नदी / तालाब की गाद, गोबर की खाद और बालू को इनकी कम लागत एवं इनमें प्राकृतिक जैविक जीवाणुओं की प्रचुरता होने के कारण वरीयता दी गयी और उनका उपयोग किया गया। अमूमन सरकार द्वारा मार्च–जून के बीच किये जाने वाले राहत कार्यों में तालाब से गाद निकालने का काम शामिल होने के कारण यह कार्यक्रम और अधिक प्रभावी हुआ। तालाबों से गाद निकालने के बाद उनका प्रयोग मिट्टी की दशा सुधारने के लिए किया गया। इस प्रकार एक गतिविधि से एक ही समय में दो फायदे मिले। एक तरफ तो तालाबों की जल संग्रहण क्षमता बढ़ी और दूसरी तरफ पौधरोपण के लिए खोदे गये गढ्ढों की जल धारण क्षमता भी बढ़ी। इस प्रारूप परिवर्तन की वजह से उन्नत हुई जल धारण क्षमता में सुधार व पोषक तत्वों की बेहतर आपूर्ति ने पौधों को जीवित रहने एवं बढ़ने में बेहतर योगदान दिया।

वर्षा जल संचयन

पानी की कमी ने इस क्षेत्र में पौधों को जीवित बनाये रखने एवं विकास के लिए वर्षा जल संचयन को आवश्यक बना दिया है। इस हेतु प्रत्येक गांव से पांच किसानों के खेतों का चयन किया गया। जल संरक्षण हेतु दो तकनीकों जैसे –मेड़ व नाली बनाकर सूक्ष्म जल ग्राहण क्षेत्र का विकास तथा आवश्यकतानुसार भूमि को आकार प्रदान कर जल संरक्षण की विधि अपनायी गयी।

पंक्तियों में वृक्षारोपण

यहां उल्लेख किया जाना उचित होगा कि प्राकृतिक ढंग से उगे वृक्ष खेतों में अस्त–व्यस्त ढंग से उगे होते हैं और ट्रैक्टर के प्रयोग में बाधा बनते हैं। यह बहुत मुश्किल था कि किसानों को ट्रैक्टर का प्रयोग न करने पर तैयार किया जा सके। लेकिन किसान इस बात पर तैयार हो गये कि एक निश्चित दूरी (20x10 मीटर) पर इस तरीके से पौध लगाया जाय ताकि खेत की जुताई एवं खेत में अन्य यंत्रों के उपयोग में बाधा न उत्पन्न हो। एक अच्छी बारिश (जिसमें मिट्टी पूरी तरह भीग जाये) के बाद पौधरोपण पूरा कर लिया गया था। पौधरोपण करने हेतु फुहार पड़ने वाली स्थिति को वरीयता दी गयी, क्योंकि इससे बारिश के पानी का अधिकाधिक लाभ मिलता है और पौधों को नुकसान पहुंचने की संभावना अत्यन्त कम होती है। एक हेक्टेयर में अनुमानतः शमी, बबूल एवं डीजर्ट टीक के 10–10 तथा मोपानी के 20 पौधों सहित कुल 50 पौधे लगाये गये। इस प्रकार प्रत्येक प्रजातियों के विभिन्न फायदों का संतुलन भी बना रहा। इन पौधों को जानवरों से बचाने के लिए, प्रत्येक नये रोपे गये पौधे के चारों तरफ स्थानीय स्तर पर उपलब्ध विलायती बबूल नामक पौधे की कांटेदार लकड़ी से बाड़ा बना दिया गया।

परिणाम

संस्थान के अनुभव से यह स्पष्ट होता है कि सफलता पूर्वक पेड़ संस्थापन एकीकृत रणनीति और गतिविधियों जैसे – पौधरोपण, सुरक्षा आदि की समयबद्धता पर निर्भर करता है। परिणाम यह भी दर्शाते हैं कि सूक्ष्म जल ग्रहण के कारण नमी रोकने की क्षमता दुगुनी हो जाती है। ये योगदान पौधों की जीवितता बनाये रखने के लिए बेहतर है। अन्य वृक्षारोपण कार्यक्रमों में जहां मुख्य रूप से सुरक्षा न हो पाने के कारण 10–15 प्रतिशत पौधे ही बचते हैं, वहीं इस प्रक्रिया में नियन्त्रित अवस्था होने के कारण 52–66 प्रतिशत तक पौधे बच गये। परीक्षण के पश्चात् रोपाई करने के कारण पौधों की औसत ऊंचाई भी दुगुनी हुई। इस प्रकार, उच्च जीवितता एवं उपज इस एकीकृत प्रयास और पौधों की सुरक्षा तथा नियमित देख–रेख में किसानों की सहभागिता की सफलता को दर्शाते हैं।

यह भी देखा गया कि सफल पौध संस्थापन के लिए 3–4 वर्षों की देख–रेख और सुरक्षा आवश्यक है। अतः यह अनुमानित हो सकता है कि प्रस्तावित तंत्र से एक हेक्टेयर से रू0 10,000–20,000/- तक की आमदनी बढ़ेगी इसके साथ ही सूखा क्षेत्र के लिए अनुकूलन में भी वृद्धि होगी, जो कि इस क्षेत्र में एक स्थाई तंत्र के लिए पहली आवश्यकता है। आस–पास के क्षेत्रों के किसान नर्सरी तैयार करते है और गांवों में पौध बेचकर आय अर्जन भी कर रहे हैं। यद्यपि वन विभाग इस बात से अभी अज्ञात है कि सफल पौध संस्थापन के लिए विकेन्द्रीकरण एक प्रभावी व सफल तरीका हो सकता है। सम्भव है कि, आगे आने वाले दिनों में इस परिस्थिति को उन्नत बनाने के लिए यह रणनीति व प्रक्रिया कुछ प्रभावी माध्यम बन सके।

■

वरिष्ठ वैज्ञानिक
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान
जोधपुर–342003
ईमेल : a.k_sharma@sify.com

Farming Diversity
LEISA INDIA, Vol. 11, No.1, Pg. # 16-17, March 2009

Issues and Themes of LEISA INDIA Published in English 1999-2011

V.1, No.1, 1999	:	Markets for LEISA and Organic products
V.1, No. 2, 1999	:	Stakeholders in Research
V.1, No. 2, 1999	:	Restoring biodiversity
V.2, No. 1, 2000	:	Desertification
V.2, No. 2, 2000	:	Farmer innovations
V.2, No. 3, 2000	:	Farming in the forest
V.2, No. 4, 2000	:	Monocultures towards sustainability
V.3, No. 1, 2001	:	Coping with disaster
V.3, No. 2, 2001	:	Go global stay local
V.3, No. 3, 2001	:	Lessons in scaling up
V.3, No. 4, 2001	:	Biotechnology
V.4, No. 1, 2002	:	Managing Livestock
V.4, No. 2, 2002	:	Rural Communication
V.4, No. 3, 2002	:	Recreating living soil
V.4, No. 4, 2002	:	Women in agriculture
V.5, No. 1, 2003	:	Farmers Field School
V.5, No. 2, 2003	:	Ways of water harvesting
V.5, No. 3, 2003	:	Access to resources
V.5, No. 4, 2003	:	Reversing Degradation
V.6, No. 1, 2004	:	Valuing crop diversity
V.6, No. 2, 2004	:	New generation of farmers
V.6, No. 3, 2004	:	Post harvest Management
V.6, No. 4, 2004	:	Farming with nature
V.7, No. 1, 2005	:	On Farm Energy
V.7, No. 2, 2005	:	More than Money
V.7, No. 3, 2005	:	Contribution of Small Animals
V.7, No. 4, 2005	:	Towards Policy Change
V.8, No. 1, 2006	:	Documentation for Change
V.8, No. 2, 2006	:	Changing Farming Practices
V.8, No. 3, 2006	:	Knowledge Building Processes
V.8, No. 4, 2006	:	Nurturing Ecological Processes
V.9, No. 1, 2007	:	Farmers Coming together
V.9, No. 2, 2007	:	Securing Seed Supply
V.9, No. 3, 2007	:	Healthy Produce, People and Environ.
V.9, No. 4, 2007	:	Ecological Pest Management
V.10, No. 1, 2008	:	Towards Fairer Trade
V.10, No. 2, 2008	:	Living soils
V.10, No. 3, 2008	:	Farming and Social Inclusion
V.10, No. 4, 2008	:	Dealing with Climate Change
V.11, No. 1, 2009	:	Farming Diversity
V.11, No. 2, 2009	:	Farmers as Entrepreneurs
V.11, No. 3, 2009	:	Women and food sovereignty
V.11, No. 4, 2009	:	Scaling up and sustaining the gains
V.12, No. 1, 2010	:	Livestock for sustainable livelihoods
V.12, No. 2, 2010	:	Finance for farming
V.12, No. 3, 2010	:	Managing water for sustainable farming
V. 13, No.1, 2011	:	Youth in farming
V. 13, No.2, 2011	:	Trees and farming
V. 13, No.3, 2011	:	Regional food systems

■

खाद्य सुरक्षा एवं सम्प्रभुता पर महिलाओं का नियंत्रण

समुदाय के मुद्दों और परिप्रेक्ष्य को समझकर उनके विचारों को मूर्त रूप प्रदान करना एवं संगठित होने हेतु उत्प्रेरित करना एक स्थाई व उचित परिवर्तन की कुंजी है। जेण्डर में सकारात्मक बदलाव लाने एवं उन्हें सशक्त करने के केन्द्र में ''उत्थान'' द्वारा किये गये प्रयास प्रभावी हैं।

नरेश जाधव और पल्लवी सोबती-राजपाल

फोटो : उत्थान

परम्परागत बीजों के भण्डारण के लिए परम्परागत विधि का प्रयोग

दाहोद जिले के धनपुर विकास खण्ड में मूल रूप से निवास करने वाली लगभग 70 प्रतिशत आदिवासी जनसंख्या की एक स्वयं स्थापित इकाई भी है। 90 के दशक के मध्य में रसायनिक कीटनाशकों, उर्वरकों, संकर बीजों के बेतहाशा प्रयोग से सिंचाई के लिए पानी का उपयोग बढ़ा, मृदा उर्वरता में कमी आई और कृषि निवेश की बढ़ती लागत ने कृषि को अलाभकर एवं अस्थाई बना दिया। गिरते कृषि उत्पादन, घटते प्राकृतिक संसाधनों और कम होते वनों से लोगों को अपने खाने और आजीविका के लिए कर्ज लेने व पलायन करने पर मजबूर होना पड़ा। आज, धनपुर की वर्तमान तस्वीर बहुत ही विकृत एवं छिन्न–भिन्न है। बाहरी शक्तियों के दखल के कारण खेती पर स्थानीय समुदायों का नियंत्रण नहीं रह गया है। उनकी खेती स्थानीय उत्पादन एवं उपभोग पर आधारित न होकर बाजार आधारित हो गई। इसके अतिरिक्त परम्परागत संस्कृति एवं ज्ञान की अनदेखी व अनुपयुक्त सरकारी नीतियों द्वारा थोपी गयी गतिविधियों के कारण कृषि की निर्भरता बाहरी संसाधनों पर बढ़ती जा रही है।

कहना गलत न होगा कि इन बदली परिस्थितियों का सर्वाधिक प्रभाव महिलाओं पर पड़ा है। घटते प्राकृतिक संसाधनों और पारम्परिक संस्कृति में आई गिरावट के कारण इनको दुहरे घातक परिणाम झेलने पड़े हैं। पानी, चारा और जलावनी लकड़ी एकत्रित करने के लिए इन आदिवासी महिलाओं को और अधिक कठिन परिश्रम करना पड़ रहा है। चारा, जलावनी लकड़ी और पानी की तलाश में इनको दूरस्थ क्षेत्रों तक जाना पड़ रहा है, जिसमें इनका लम्बा समय व्यतीत हो रहा है और जिसका सीधा असर इनके स्वास्थ्य पर पड़ रहा है। गरीबी व लुप्त होती आदिवासी संस्कृति ने भी महिलाओं को प्रभावित किया है। जेण्डर सम्बन्धी रूढ़िवादी भूमिकाओं और काम के बोझ ने इनकी काम करने की क्षमता को नकारा, सशक्त होने की प्रक्रिया में इनकी भागीदारी के अवसरों को खत्म किया, जिससे इनके आत्मसम्मान व विश्वास में कमी आई है।

इन समस्याओं को देखते हुए,' वनिता शक्ति महिला संगठन' द्वारा बड़ी संख्या में आदिवासी महिलाओं को संगठित कर जैव विविधता के दृष्टिकोण के साथ महिलाओं की आजीविका सुरक्षा को उन्नत बनाने के लिए एक महत्वपूर्ण पहल की गयी। इस समूह को एक स्वयंसेवी संगठन ''उत्थान'' द्वारा सहयोग प्रदान किया गया। इस पहल का मुख्य उद्देश्य महिलाओं के स्वयं स्वामित्व एवं प्रबन्धन में उत्पादक सम्पत्तियों और सहयोगी तंत्रों का निर्माण कर उनके माध्यम से आमदनी में वृद्धि करना, कठिन परिश्रम को कम करना और उत्पादकता को बढ़ाना था। इसके अन्तर्गत इस प्रकार की रणनीति बनाई गयी कि स्थानीय संगठनों जैसे संघों आदि के माध्यम से इनको क्षेत्र की जेण्डर एवं आजीविका की आवश्यकता को प्रभावी बनाने वाले सरकारी कार्यक्रमों से जोड़ते हुए समय से उनकी गुणवत्तापूर्ण पहुंच को सुनिश्चित किया जा सके।

खाद्य सुरक्षा के लिए सम्पत्तियों के प्रबन्धन में नेतृत्व लेते हुए तीन जैव विविधता कार्यशील समूह गठित किये गये। जैव विविधिता समूह और संघ के नेतृत्वकर्त्ताओं को विभिन्न मुद्दों पर गहन रूप से प्रशिक्षित किया गया। इसके उल्लेखनीय योगदान से संघ सदस्यों को नेतृत्वकर्त्ता के तौर पर सशक्त किया गया और संघ को एक संस्था/संस्थान के रूप में मजबूत किया गया। संघों को और मजबूती प्रदान करने के उद्देश्य से इनको ऐसे क्षेत्रों में भ्रमण कराया गया, जहां पर इस तरह की कुछ व्यावहारिक गतिविधियां अपनायी जा रही थीं। इन प्रयासों से महिलाओं की दक्षता, आत्मविश्वास और सूचनाओं में वृद्धि हुई। दूसरी तरफ नियमित योजना बनाकर संघों के बीच में जैव विविधता समूहों का संस्थागत स्वरूप तैयार किया गया, जिसके तहत् गतिविधि को कार्यान्वित करना, जैव विविधिता, बैंकों के कार्यों पर चर्चा करना, बीज/चारा/ ईंधन तक पहुंच बनाने के लिए रणनीति तैयार करना और तद्नुरूप कार्य करना तथा इन सभी कार्यों की निगरानी करने के लिए संघ की कार्यकारी समिति एवं प्रतिनिधि महासभा के प्रति उत्तरदायी होने आदि के काम शामिल थे। इसका मुख्य उद्देश्य उनके अन्दर प्रबन्धकीय दक्षता एवं अच्छे प्रशासन के मूल्यों को बढ़ाना था। जैव विविधता कार्यकारी समूहों, सक्रिय महिला नेत्त्व और महिलाओं के संघों की कार्यकारी समिति इस पूरी प्रक्रिया में आगे रहीं।

महिलाओं द्वारा क्रियान्वित चारा व बीज बैंक

संघ लगभग 300 परिवारों को स्थानीय प्रजातियों जैसे भटोरी और दानगर के गुणवत्तापूर्ण चारा को उपलब्ध कराने में समर्थ एवं सक्षम

है। 65 खेतों में प्रदर्शन के लिए स्थानीय और कम पानी चाहने वाली प्रजाति भटोरी और बजरी चारा की जैविक खेती खेतों की मेड़ों और फसलों के बीच में की गयी, जिससे 37500 किग्रा0 हरे चारे का उत्पादन प्राप्त हुआ। चारा बैंकिंग की इस पहल से महिलाओं को स्थानीय स्तर पर चारा मिलने के अवसर बढ़े। एक बड़ा फायदा यह भी हुआ कि ये महिलाएं आत्मविश्वास से भरपूर होकर अपनी आमदनी बढ़ाने व घर के प्रयोग के लिए पशुपालन हेतु सरकारी योजनाओं से जुड़ने लगीं। '' वनिता शक्ति महिला संगठन'' तथा ''उत्थान'' ने 3 गांवों में व्यावसायिक चारा फसल उत्पादकों को जैविक विधि से खेती करने हेतु सफलतापूर्वक प्रेरित किया। इस गतिविधि से जंगल से चारा एकत्र करने के लिए किये जाने वाले कठिन परिश्रम एवं आपसी विवादों में कमी आई, कर्ज लेने की संख्या घटी, अतिरिक्त आमदनी का कृषि में उपयोग बढ़ा और जानवरों के पोषण स्तर में सुधार हुआ।

पिछले 3 वर्षों में, दाहोद जिले में 42 गांवों के 3 समूहों में 3 बीज और 3 चारा बैंक स्थापित किये जा चुके हैं। स्थान चयन, उपयुक्तता, जोखिम आकलन, भण्डारण की पारम्परिक और स्थाई विधियों की पहचान आदि को निश्चित करने से पहले महिला सदस्यों से चर्चा करने के पश्चात् स्थान चयन को अन्तिम रूप प्रदान किया गया। इन बैंकों का मुख्य उद्देश्य ऐसे लोगों की मदद करना था, जो आपात काल के दौरान चारा और बीज क्रय करने में असमर्थ थे।

बीज बैंकों के माध्यम से लगभग 400 परिवारों को पारम्परिक बीज जैसे – तूतिया उर्द, लोकवन गेंहूं, शरबती और टुकडी गेंहूं, पीला चना, साठी, कठोरी आदि उपलब्ध कराये गये। लगभग 70 प्रतिशत जैविक विधि की प्रक्रिया से इन बीजों की खेती की गयी, जिसके परिणामस्वरूप अच्छा उत्पादन मिला। इन उत्पादों को अधिकांशतः महिला संघ की सदस्यों द्वारा खरीद लिया गया, जो स्वयं वर्मी कम्पोस्ट बनाने, औषधीय / जैव कीटनाशक तैयार करने एवं प्रदर्शन करने में संलग्न थीं। बीज की एक विलुप्तप्राय प्रजाति काला माग को सुदूर स्थित गांवों से थोड़ा अधिक मूल्य देकर प्राप्त किया गया। चार प्रदर्शन क्षेत्रों के माध्यम से 40 किग्रा0 काला माग उत्पादित किया गया, जिसे बैंक ने आगे बेचने के लिए खरीद लिया। इससे एक तरफ तो कर्ज लेने की प्रक्रिया में कमी आयी, दूसरी तरफ संकर प्रजातियों से पारम्परिक बीज प्रजातियों की तरफ आने का प्रदर्शन करते हुए बीज की 6 स्थानीय प्रजातियों का संरक्षण किया गया। इस प्रकार स्थानीय जैव विविधता का संरक्षण किया गया।

बैंकों की स्थापना से पारम्परिक भण्डारण प्रक्रिया को संरक्षित करने में मदद मिली और अपनी सम्पत्तियों का प्रबन्धन करने से महिलाओं के अन्दर आत्मविश्वास बढ़ा और वे सशक्त हुईं। अब समुदाय इतना अधिक सक्षम हो चुका है कि वह अधिक उपज देने वाली एक बेकार / अनुपयोगी अनाज और परम्परागत कृषि तंत्र से मिलने वाली उन्नत अनाज में अन्तर महसूस कर सके।

एक स्वयंसेवी संगठन उत्थान ने 1994 में गुजरात के उत्तरी–पूर्वी भाग में स्थित दहोद जिले के धनपुर विकास खण्ड के 42 गांवों में महिलाओं के साथ काम करते हुए यह पहल आरम्भ की। प्रत्येक गांव में 12–15 महिलाओं को मिलाकर एक समूह का गठन किया गया, जिसे वनिता महिला शक्ति संगठन का नाम दिया गया। इन सभी समूहों को मिलाकर विकास खण्ड स्तर पर एक वनिता महिला शक्ति संगठन के नाम से संघ बनाया गया, जिसमें धनपुर विकास खण्ड के 51 गांवों से 208 महिला समूहों की 2651 महिला सदस्यों की सहभागिता थी। इससे महिला मुखिया की जरूरत दिखी और भेद–भाव व असुरक्षा की भावना को तोड़ने में मदद मिली, जो एक महिला होने के नाते उन्हें प्रभावित करती थीं। इन महिला संघों ने महिला सदस्यों द्वारा विभिन्न रणनीतियों के माध्यम से स्वयं के लिए चिन्हित किये गये विभिन्न मुद्दों पर काम किया।

उत्थान ने पारिस्थितिकी संतुलन, जैव विविधता संरक्षण, समानता और मानवाधिकार आदि विभिन्न मुद्दों पर महिला संघों का क्षमता एवं दक्षता अभिवर्धन का कार्य किया। इसने महिला सदस्यों को अच्छे संचालन हेतु पारंगत करने के मूल्यों व दक्षता पर भी प्रशिक्षित किया, जिससे संस्था को स्थाई बनाये रखने में मदद मिली। इस प्रकार मुखियाओं को प्रशिक्षित करने से संघ को आत्मनिर्भरता और स्थाईत्व की ओर अग्रसर होने में सहयोग हुआ।

स्थाई कृषिगत गतिविधियों को प्रोत्साहन देना

यद्यपि स्थाई खेती पद्धति की ओर लौटना एक धीमी प्रक्रिया है, फिर भी यह एक उचित विकल्प है। लोगों ने यह समझ लिया है कि स्थाई खेती के माध्यम से ही संकर प्रजाति से पारम्परिक बीज प्रजातियों की ओर वापस लौटना संभव हो सकेगा। महिलाएं जागरूक हुईं कि भूजल के अधिक दोहन से सूखा और मरूस्थल की संभावनाएं प्रबल होती हैं, जिसके परिणाम स्वरूप क्षेत्र के लोगों को अस्थाई पलायन करना पड़ता है। महिलाओं ने पारम्परिक बीज प्रजातियों के बाजार को देखते हुए इसकी उन्नत उत्पादकता के विकल्पों को विकसित किया है।

विगत वर्षों में, 225 परिवार पूर्ण अथवा आंशिक रूप से जैविक खेती कर रहे हैं। 240 नेतृत्वकर्त्ता वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन और जैव कीटनाशक तैयार करने में प्रशिक्षित हो चुके हैं। प्रथम चरण में 180 वर्मी कम्पोस्ट प्रदर्शन के माध्यम से 270 एकड़ खेत को पोषक तत्वों की आपूर्ति उपलब्ध कराई गयी है और यही प्रक्रिया आगामी 10–15 वर्षों तक निरन्तर चलती रहेगी। 270 एकड भूमि पर रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग बन्द करने व वर्मी कम्पोस्ट का प्रयोग करने से पर्यावरण संरक्षण में भी योगदान हुआ है। एक अनुमान के अनुसार 40,500 – 1,08,000 किग्रा0 डीएपी और 67,500 किग्रा0 यूरिया का प्रयोग रूका, जिससे एक तरफ तो भूमि को होने वाली हानियों से बचाव हुआ, दूसरी तरफ आर्थिक बचत भी हुई। अगर आर्थिक विश्लेषण करें तो पता चलता है कि उक्त मात्रा में रासायनिक खादों के प्रयोग से बचने की स्थिति में रू0 13,63,500 बचा। इससे खेती की निवेश लागत में कमी आयी, प्रयोज्य लागत बढ़ी और ऋणग्रस्तता में कमी आई। साथ ही एक छोटे से परिक्षेत्र में ही सही रसायनिक उर्वरकों का प्रयोग घटाने से अप्रत्यक्ष तौर पर ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा में भी कमी आयी होगी।

जलावनी लकड़ी तक पहुंच

महिलाओं ने नर्सरी में 38,000 छोटे पौधों को तैयार किया और

औषधीय पौधों की पांच प्रजातियों – अश्वगंधा, अमला, कांसकी, शतावरी, सहिजन को अपने क्षेत्र में पुनः लाकर उनका संरक्षण किया। उनके श्रम के फलस्वरूप संघ से इन महिलाओं को समतुल्य मूल्य की जलावनी लकड़ी उपलब्ध कराई गयी। सरकारी योजनाओं से जुड़ाव के द्वारा महिला समूहों ने 10 गांवों में मिलाकर 50 हेक्टेयर भूमि पर 1,00,000 जलावनी लकड़ी की प्रजातियों के वृक्षों को लगाया। इस वृक्षारोपण से प्रतिवर्ष 5,58,000 किग्रा0 जलावनी लकड़ी भविष्य में प्राप्त होने की संभावना है, जिससे लगभग 1,24,000 परिवारों की 10–15 वर्षों तक ईधन की जरूरतें पूरी करने में सहायता मिलेगी। 4 गांवों में घास की स्थानीय प्रजातियों – जिजवो, धमान, हमटा को लगाकर वनारोपण का बढ़ावा दिया गया है। इस पूरी प्रक्रिया से पांच औषधीय पौधों को पुनः पहचानने व संरक्षण करने, हरित क्षेत्र बढ़ाने, श्रमसाध्यता घटाने, और जंगल से जलावनी लकड़ी एकत्र करने के दौरान होने वाले विवादों तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या को कम करने में महत्वपूर्ण योगदान मिला है।

शासन–प्रशासन को प्रभावित करना

संघ द्वारा स्थानीय वन विभाग, जिला प्रशासन, कृषि विभाग, आदिवासी विभाग, महिला एवं बाल विकास विभाग आदि के साथ सम्पर्क / समन्वयन स्थापित करते हुए चल रही सरकारी योजनाओं के माध्यम से वर्मी कम्पोस्टिंग, औषधीय नर्सरी उत्पादन और फलोत्पादन के लिए लगभग रू0 10,00,000.00 के संसाधन प्राप्त किये गये। स्थानीय प्रशासन ने संघ के कार्यों को देखा और उन्हें यह सलाह दी कि वे सरकार के साथ सम्पर्क स्थापित कर अपने कार्यों को और अधिक बढ़ायें। ''उत्थान'' और संघ द्वारा इन का क्रियान्वयन किया जा रहा है। पिछले दो वर्षों में चारा की बढ़ी हुई मांग को पूरा करने के कारण चारा बैंक का भण्डार खत्म हो गया। ऐसी परिस्थिति में चारा का घोर संकट उत्पन्न होने पर संघ के लोगों ने सरकार को इस बात के लिए तैयार किया कि वह चारा की आवश्यकता को पूरा करे। इस पूरी प्रक्रिया में विकासखण्ड स्तरीय चारा डिपो का खुलना मुख्य घटना है, जिससे लगभग 2500 लोग किफायती दर पर चारा पाने में सक्षम होगें।

संघ ने सरकारी अधिकारियों पर इस बात के लिए दबाव बनाया और यह सुनिश्चित किया कि वे उचित दर पर वितरण करायें। इन प्रयासों से संकट के समय राज्य की जिम्मेदारियों को पूरा कराना सुनिश्चित करने व संचालन करने में मदद मिली। सरकारी विभागों से सम्पर्क स्थापित होने के कारण समुदाय के बीच में विभिन्न सरकारी योजनाओं से सम्बन्धित सूचनाएं वितरित करने में भी सहायता मिली। विभिन्न गतिविधियों के लिए संसाधनों की लामबन्दी करने से स्थाई कृषि को प्रोत्साहन देने, आमदनी बढ़ाने से बाहर पलायन आदि को कम किया जा सका। इस प्रकार संघ ने सीमान्त कृषकों तक संसाधनों की पहुंच बनाने के साथ ही उन्हें बहुत सी अतिरिक्त क्रियाओं जैसे प्रशिक्षण, तकनीकी विशेषज्ञता, महत्व विश्लेषण आदि में भी दक्ष बनाया।

कार्यक्रम का विस्तार

वैश्विक पर्यावरण सुविधा और आदिवासी सहायक योजना जैसे छोटे अनुदानित कार्यक्रम के अन्तर्गत उपलब्ध सरकारी योजनाओं से जुड़ाव करते हुए महिलाओं का संघ समुदाय के लोगों, विशेषकर महिलाओं की सोच को प्रभावित करने में सक्षम हो सका है। पहले चरण की सफलता के तौर पर आर्थिक सशक्तता, यन्त्र रचना के स्थाईत्व और संघ की सामूहिक प्रबन्धन दक्षता को देखा जा सकता है। अन्य गांवों से इसी तरह की गतिविधियों की मांग पर आगे बढ़कर काम किया गया और पिछले चरण में की गयी गतिविधियों से सीख लेते हुए उत्थान के सहयोग से की गयी गतिविधियों को विस्तारित किया गया। प्रथम चरण में इस कार्य का फैलाव जहां 24 गांवों में था, वहीं 18 नये गांवों में ऐसी गतिविधियां की गयीं, जो एक जैसी आजीविका आधारित संगठनों की स्थापना और उससे सम्बन्धित गतिविधियों की तैयारी को दर्शाती हैं। प्रभावी माध्यमों जैसे – कीटों के नियंत्रण हेतु जैविक कीटनाशक बनाने की विधि पर पम्पलेट, 'समस्या आपनी–उकेल आपनो' शीर्षक से बनी लघु फिल्म आदि को जागरूकता बढ़ाने के लिए उपयोग किया गया। ठीक इसी प्रकार, संघ ने स्थानीय ग्राम पंचायतों को भी प्रभावित किया। लगभग 10 ग्राम पंचायतों ने इन गतिविधियों को सक्रियता से चलाने हेतु सहयोग प्रदान करने के लिए प्रस्ताव पारित कराया और कार्यों के विस्तार को गति प्रदान करने के लिए सूक्ष्म नियोजन किया।

महिला और पुरूष नेतृत्वकर्त्ताओं द्वारा स्थाई खेती की विभिन्न गतिविधियों जैसे – औषधीय कीटनाशकों, जैविक खादों और वर्मी कम्पोस्ट के माध्यम से स्थानीय फसलों की खेती और फलोत्पादन आदि के प्रदर्शन ने लोगों को स्थाईत्व और खाद्य सुरक्षा के प्रसार की और प्रवृत्त किया। संघ के तहत् खेती की प्रक्रिया को गति प्रदान करने के लिए एक क्षेत्र सन्दर्भ समूह (क्षेत्र संसाधन समूह) का गठन किया गया है, जो स्थाई खेती के समस्त पहलुओं को सशक्त करने, वन पारिस्थितिकी व जैव विविधता को संरक्षित करने और सीमान्त समुदायों की आजीविका को सुरक्षित करने सम्बन्धित समस्त गतिविधियों को करने के लिए आगे आती है, लोगों को चिन्हित करती है एवं गतिविधियों को क्रियान्वित करने, उनका संचालन करने एवं उनके उत्पादों को बाजार से जोड़ने में मदद करती है।

आज 'वनिता शक्ति महिला संगठन' इस अनुभवजन्य सीख के माध्यम से मुद्दों पर समझ बनाते हुए लोगों को सशक्त करने का काम निरन्तर कर रही है। जलवायु परिवर्तन एवं आनुवंशिक रूप से रूपान्तरिक बीज प्रजातियों एवं कीटनाशकों के बढ़ते प्रयोग के कारण उत्पन्न पर्यावरणीय संकट के इस दौर में महिलाएं प्रमुखता से यह महसूस करने लगी हैं कि वे परम्परागत कृषि एवं जीवन शैली के संरक्षण को प्रोत्साहन देते हुए ही इन परिस्थितियों में अपनी उत्तरजीवितता बनाये रख सकती हैं। वे यह भी विश्वास करने लगी हैं कि इससे आजीविका के प्रति स्थाईत्व लाने की उनकी सामर्थ्य बढ़ेगी। यह एक निरन्तर चलने वाली चुनौतीपूर्ण प्रक्रिया है, जिसमें महिलाएं अपने परिवार, समुदाय और राज्य के साथ अपने ''सामाजिक सम्पर्कों'' को पुनर्विश्लेषित कर सकती हैं।

■

उत्थान
36, चिलकूट ट्विन बंगला,
मैनेजमेण्ट इन्क्लेव के पीछे, वस्त्रपुर,
अहमदाबाद – 380015
ईमेल : utthan.ahmedabad@gmail.com
वेबसाईट : utthangujarat.org

Women and Food Sovereignty
LEISA INDIA, Vol. 11, No.3, Pg. # 21-23, Sept 2009

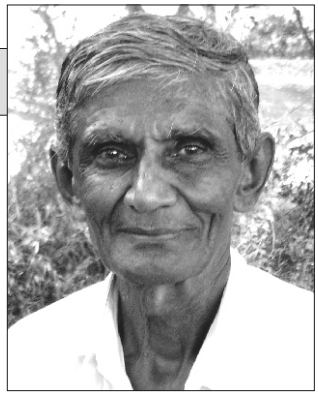

विविधीकृत खेती पद्धति

एल० नारायण रेड्डी

अन्य दूसरे क्षेत्रों जैसे – सूचना एवं प्रौद्योगिकी, जैव तकनीक आदि के मुकाबले अल्प मात्रा में राजस्व उपार्जित करने के कारण कृषि, केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा अत्यधिक उपेक्षित है। इससे भी अधिक आश्चर्यजनक है कि इसमें अन्य व्यवसायों की तुलना में लगने वाली कड़ी मेहनत, अधिक समय एवं उच्च जोखिम शामिल रहता है। इसलिए यह किसानों द्वारा भी उपेक्षित है। लेकिन इन सबके बीच सबसे दु:खद स्थिति यह है कि कृषि निवेश में लगने वाली लागत के सापेक्ष कृषि उत्पादों पर सरकार द्वारा दिया जाने वाला समर्थन मूल्य पर्याप्त न होने के कारण हतोत्साहित करने वाला होता है। तथापि, एक बात महत्वपूर्ण है कि प्रत्येक जीवन के लिए खाना महत्वपूर्ण है, जो कृषि से प्राप्त होता है।

एक किसान के तौर पर, हमने अपने 45 वर्षों के अनुभव से यह सीखा कि केवल फसल उगाना ही खेती नहीं है। यह उक्ति भारत जैसे देश के सन्दर्भ में विशेष सही है, जहां 80 प्रतिशत किसान लघु एवं सीमान्त हैं। कम से कम इन किसानों के लिए कृषि फसल और पशुधन का एक समन्वित तंत्र होगा। हरी खाद, चारा, भोजन, रेशा, ईंधन व इमारती लकड़ियों के लिए वृक्ष लगाये जाते हैं। जानवरों की बहुत सी प्रजातियां जैसे– गाय या भैंस, भेड़ या बकरी, मुर्गी या सुअर खेत के अपशिष्टों (हरी घास, सूखी घास, पेड़ों की छंटाई के बाद की टहनियों व खर– पतवार, टूटे व अपरिपक्व अना,ज सड़े–गले फल आदि) को खाते हैं और दूध, भोजन, अण्डे, पैसे आदि उत्पादित करने के साथ ही मूल्यवान खाद भी उपलब्ध कराते हैं।

वृक्ष केवल चारा और हरी खाद ही नहीं उपलब्ध कराते, वरन् मृदा को पर्याप्त मात्रा में बायोमॉस उपलब्ध कराने के साथ लाभकारी कीड़ों और पक्षियों को आश्रय स्थल, गर्म हवाओं से नमी व मृदा से जल संरक्षण, अपनी लम्बी जड़ श्रृंखला के चारों तरफ दस खरब से भी अधिक सूक्ष्म जीवों को समायोजित कर मृदा उर्वरता को समृद्ध करने और निश्चित तौर पर आमदनी उपलब्ध कराने का काम भी करते हैं। इसी प्रकार जानवर भी बहु उपयोगी होते हैं। एक तरफ तो वे खेत पर अपशिष्टों को खाते हुए समुचित घास चराई कर खर–पतवार को नियन्त्रित करते हैं, तो दूसरी तरफ खेत के लिए मूल्यवाद खाद भी उपलब्ध कराते हैं। उनके द्वारा उत्सर्जित मल–मूत्र का प्रयोग गोबर गैस प्लाण्ट के लिए कच्चे माल के तौर पर प्रयोग किया जाता है और इस गोबर गैस से खाना बनाने के लिए ईंधन और प्रकाश की व्यवस्था होती है, साथ में फसलों के लिए बहुमूल्य खाद भी मिलती है।

होना तो यह चाहिए था कि फसल तंत्र में चयन के अवसर उपलब्ध होने पर स्थानीय समुदाय के साथ अपने परिवार के उपभोग की आवश्यकता को महत्व दिया जाता। लेकिन दुर्भाग्य से, सरकार और किसान दोनों ने ही व्यावसायिक फसलों जैसे – कपास, तम्बाकू, गन्ना, मिर्चा, यूकेलिप्टस आदि को महत्व दिया और उन्हें निर्यात के उद्देश्य से उगाने लगे। ये फसलें किसानों व स्थानीय समुदाय को न तो भोजन व चारा उपलब्ध कराती हैं और न ही ईंधन। पशुओं की घटती संख्या के लिए चारे की कमी एक मुख्य कारण है। अब बहुत से किसानों की निर्भरता जुताई के लिए ट्रैक्टर पर और खाद के लिए रासायनिक उर्वरकों पर होती है। रसायनों के प्रयोग से न केवल मृदा की सघनता को नुकसान पहुंचता, वरन् इससे मिट्टी पर पपड़ी जम जाती है और सूक्ष्म मृदा जीव भी नष्ट हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में किसानों को खेती में अधिक से अधिक बाहरी निवेश लगानी पड़ती है। नतीजतन उनके ऊपर कर्ज का बोझ बढ़ता है।

न केवल भारत, बल्कि अन्य देशों में भी इस विनष्ट होती खेती से पार पाने का एकमात्र समाधान वृक्ष, फसल व जानवरों में विविधता लाते हुए पारिस्थितिकी सम्मत खेती ही है। कर्नाटक राज्य में बंगलौर ग्रामीण जनपद में डोडाबल्लापुरा के निकट मेरे पास 4.2 एकड़ निजी भूमि है, जिस पर हम भोजन जैसे – अनाज, बीन्स, खाद्य तेल, लगभग सभी प्रकार की सब्जियां और फल उगाते हैं, जो 10 सदस्यों के परिवार के लिए पूरे वर्ष के लिए पर्याप्त होता है। इसके अलावा हम लगभग 10,000 नारियल, 8 टन सपोता, 5 टन पपीता, 2 टन एवोकादो, 2 टन सोयाबीन, 10 टन विभिन्न मौसमी सब्जियां और विविध मौसमी फल भी उगा कर बाजार भेजते हैं। हमारे पास 8 गायें, 12 बकरियां और 25 देशी प्रजाति की मुर्गियां हैं। हमने 15 वर्ष पहले खेत के चारों तरफ बाड़े के तौर पर 300 विभिन्न प्रकार के चारा, हरी खाद और इमारती लकड़ी प्रदान करने वाले वृक्ष लगा रखे हैं और इन इमारती वृक्षों को आगामी 15 वर्षों के दौरान इन्हें बेचने पर हमें 30 लाख रूपये की आमदनी होनी निश्चित है। इसके अलावा अन्य फायदे अतिरिक्त हैं। हमने अपने जल संग्रह हौज में 200 मछलियां पाल रखी हैं, जिससे सालाना आमदनी रू0 6000.00 की होती है। वृक्षों, जानवरों, अन्तः फसली खेती तंत्र की जैव विविधता के साथ एक खेत हमें भोजन प्रदान करने के साथ ही आर्थिक सुरक्षा भी देता है। अतः हमारा केन्द्र बिन्दु एकल फसली खेती नहीं होनी चाहिए, क्योंकि यह हमें कर्ज और अन्ततः मृदा तथा परिवारों को तोड़ने की तरफ ले जाता है। ■

श्री निवासपुरा, वाया मारेलानाहाली
हनाबे पोस्ट, डोडाबल्लापुर तालुक,
कर्नाटक, भारत
मोबाइल : 09242950017, 09620588974

Farming Diversity
LEISA INDIA,Vol. 11, No.1, Pg. # 28, March 2009,

मूल्य संवर्द्धन : बेहतर आमदनी का सूत्र

समुदाय आधारित संगठनों के स्वशासित स्थायी मॉडल छोटे किसानों के लिए नये अवसरों की रचना करते हैं और ग्रामीण उद्योगों को बढ़ाने तथा ग्रामीण आय को स्थाईत्व प्रदान करने में अहम होते हैं। सी0सी0डी0 द्वारा किये गये इस अभिनव पहल ने ग्रामीणों की भोजन, स्वास्थ्य, ऊर्जा और रोजगार की मांग को पूरा करने के साथ ही ग्राम्य उत्पादों के लिए बाजार पर पहुंच भी बनाई।

उत्कर्ष घाटे

स्थानीय स्तर पर मूल्य अभिवृद्धि न होने के कारण कृषि में न्यून आमदनी एक समस्या बनी हुई है। अधिकांशतः किसानों के पास भण्डारण व प्रसंस्करण का कोई उचित जरिया न होने के कारण कच्चे उत्पाद ही बिक जाते हैं। शहरों में इनका भण्डारण कर उत्पादों को सजाकर, मूल्य संवर्धन के पश्चात् पुनः गांवों में उन्हें उच्चतम मूल्य पर बेचा जाता है। इस प्रकार किसान तकनीकी जानकारियों एवं संसाधनों के अभाव के कारण अपने ही उत्पाद को सस्ते में बेचकर महंगे दामों में खरीदता है। इसे दूर करने के लिए गांव स्तर पर ही उत्पादों के भण्डारण, प्रसंस्करण एवं मूल्य अभिवर्धन की व्यवस्था बना कर शहरों में इसका विपणन उच्चतम मूल्य पर किया जा सकता है। कृषि उत्पादों की तकनीक से मूल्य अभिवृद्धि ग्राम्य उद्यमिता के रूप में स्थानीय स्तर पर अधिकाधिक रोजगार उत्पन्न करने तथा बेहतर आय व सेवा प्रदान करने की एक बेहतर संभावना होगी, साथ ही यह ग्रामीण पलायन रोकने में भी मददगार साबित होगी।

'आहारम' उत्पादन कम्पनी

सी0सी0डी0 (Covenant Centre for Development) एक स्वैच्छिक संगठन है, जो तमिलनाडु के मदुराई जिले में काम कर रही है। उपरोक्त विषयक मुद्दे पर काम करने के दौरान सबसे पहले संस्था द्वारा छोटे किसानों व ग्रामीण रोजगारों को उनकी आमदनी बढ़ाने तथा स्थाईत्व प्रदान करने के लिए किसानों का एक निजी संगठन– ''आहारम परम्परागत फसल उत्पादक कम्पनी लिमिटेड'' गठित करने में मदद की। 'आहारम' छोटे किसानों तथा ग्रामीण उद्योग को सामुदायिक संगठनों के माध्यम से सशक्त करने और एकीकृत मूल्य श्रृंखला की सेवाएं प्रदान करने के लिए समर्पित है। आहारम आपूर्तिकर्ताओं से संगठित खरीददारी करने, ऋण तक पहुंच बनाने और सी0सी0डी0 की सहयोगी संस्थाओं के मंच की समन्वयन क्षमता बढ़ाने के माध्यम से ग्राम्य उत्पादों की पहुंच व्यापार व बाजार तक बना रही है।

'आहारम' के पास एक लाभकारी साझा व्यापार मॉडल है, जो कृषिगत अर्थव्यवस्था के तीन स्तरों– बाजार, संस्था और सामुदायिक संगठन से जुड़ी हुई है। आहारम व्यापार मॉडल, संस्था भागीदारों के एक मंच के माध्यम से काम करता है। यह व्यापार मॉडल सामुदायिक संगठनों को सामूहिक तौर पर लागत खरीद, उत्पादन प्रक्रिया और अपने उत्पादों पर समान मार्का के लिए एक समन्वयक के तौर पर सक्रिय है। जबकि सी0सी0डी0 आहारम के थोक खरीददारों या क्षेत्रीय व फुटकर दुकानदारों तक प्रसंस्कृत उत्पाद को आहारम मार्का पर बेचने के लिए सुगमीकर्ता की भूमिका अदा करता है। आहारम कम्पनी थोक खरीददारों और सहयोगी संस्थाओं के साथ संभार समन्वयन के माध्यम से इस विपणन का प्रबन्ध करने के साथ सामुदायिक संस्थाओं के लिए मूल्य बढ़ने पर पुनः बिक्री करने हेतु थोक में माल की खरीददारी का काम भी करता है अर्थात् सीजन ऑफ रहने पर अधिक मूल्य पाने की आशा में माल खरीद लेता और पुनः दाम चढ़ने पर या उन क्षेत्रों में, जहां उस उत्पाद की ज्यादा मांग होती है, उसे बेच देता है।

मदुराई के निकट गांवों के कुछ सौ परिवारों ने गुणवत्तायुक्त पंसारी सामानों जैसे – दालें, तेल और मसालों की थोक खरीददारी आपूर्तिकर्ताओं से छूट पर करनी प्रारम्भ कर दी है। ये आपूर्तिकर्ता सी0सी0डी0 द्वारा बनाये गये स्वयं सहायता समूहों के सदस्य हैं। सी0सी0डी0 कुछ चुनिन्दा स्वयं सहायता समूहों द्वारा इन उत्पादों को खरीदने एवं उनके प्रसंस्करण में उनकी मदद करती है। खेत के उत्पादों को खरीदने हेतु सी0सी0डी0 द्वारा परियोजना के अप्रयुक्त पैसे का प्रयोग किया जाता है व उत्पाद की बिक्री के पश्चात्, पैसा वापस होने पर उसे पुनः परियोजना खाते में प्रशिक्षण गतिविधियों के लिए वापस कर दिया जाता है।

सी0सी0डी0 आर्थिक रूप से कमजोर किसानों को अतिरिक्त आमदनी उपार्जन के लिए बाह्य संरचना तैयार करने में भी मदद करता है। उदाहरण के तौर पर उत्पाद प्रसंस्करण मशीनें जैसे – दाल मिल, आटा मिल, तेल मिल, पिसाई मशीन लगाई गयी एवं प्रसंस्करण हेतु महिलाओं के एक दल को प्रशिक्षित भी किया गया। उपभोक्ताओं ने यहां पर बाजार से 5 प्रतिशत कम मूल्य पर सामान प्राप्त किया। बिचौलियों को हटाने से उत्पादकों ने भी 10–15 प्रतिशत अधिक आय प्राप्त की साथ ही साथ घटतौली न होने के कारण उनका नुकसान भी नहीं हुआ। 300 परिवारों के इस उपभोक्ता सहकारी संघ में प्रत्येक परिवार ने 500.00 रू0 के पंसारी सामानों की खपत की, जिसका मूल्य प्रतिमाह लगभग रू01.5 लाख का था। अब यह उद्योग 10 गुना तक बढ़ चुका है और प्रत्येक परिवार की प्रति माह रू0 300.00 भागीदारी के साथ इसमें 3000 परिवारों की सहभागिता हो चुकी है। इस प्रकार, मासिक बिक्री रू0 9 लाख और सालाना बिक्री रू0 एक करोड़ है।

विक्रय से अलग, अहरम ने किसानों को कम लागत वाली खेती की पद्धति को बताने और लम्बे समय से विस्मृत पारम्परिक व्यंजनों को सिखाने हेतु 'व्यापार विकास विभाग' भी बना रखा है। बीज, कीटनाशकों और रसायनों को बचाते हुए खेती की लागत को लगभग 20 प्रतिशत तक कम किया गया, जिससे कृषि में किसानों की लागत घटी व आमदनी बढ़ी। कभी–कभी तो किसानों की आमदनी 20 प्रतिशत तक बढ़ गयी (10 प्रतिशत उत्पादन बढ़ा व 10 प्रतिशत सीधे खरीददारों को बेचने के कारण आमदनी बढ़ी)।

प्रसंस्कृत उत्पादों हेतु बाजार

प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों हेतु व्यापारिक समूह भी बने। किसान अपने उत्पादों जैसे मिर्च और आम हेतु संगठित हुए और उनका संघ बना। प्रारम्भ में, यहां पर कच्चा माल 3 से 4

प्रतिशत लाभ के साथ बेचा गया। साथ ही परिवहन में होने वाली देरी के कारण माल लाने–ले जाने में लापरवाही भी बरती गयी, परिवहन और संग्रहण आदि के दौरान तौल में घाटा भी हुआ। लेकिन 4 वर्षों तक फलों का व्यापार करने के बाद, कम्पनी ने आम का गूदा बनाने वाली फैक्टरी लगा लिया है और विभिन्न कम्पनियों जैसे पारले, एग्रो कम्पनी लिमिटेड को गूदे की बिक्री करने लगा है। सामान्यतः ये कम्पनियां ''फ्रूटी'' बेचती हैं। गांव में दो किग्रा0 आम का दाम रू0 10 होता है और इतना ही रूपया प्रसंस्करण (श्रम, फैक्टरी, डिब्बाबंदी, ऋण ब्याज आदि) पर भी लगता है। इस प्रकार तैयार उत्पाद का मूल्य रू0 20.00 प्रति किग्रा0 हुआ, लेकिन इसका विक्रय मूल्य रू0 22.00 है, जो 10 प्रतिशत लाभ की ओर संकेत करता है।

ठीक इसी प्रकार, मिर्च और हल्दी का मूल्य कच्चे माल के तौर पर रू0 7–10 प्रति किग्रा0 है, परन्तु जब स्वयं सहायता समूह इसे पाउडर के रूप में बेचते हैं, तो उन्हें 80–100 रू0 प्रति किग्रा0 10 प्रतिशत लाभ के साथ मिलता है। प्रसंस्करण इकाईयां गांव पर रोजगार भी उपलब्ध कराती हैं और शहरों की ओर होने वाले पलायन को भी रोकती हैं।

'अहरम' कम्पनी वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान रखता है और वर्ष 2006 में जैव विविधता संरक्षण आधारित व्यापार प्रोत्साहित करने हेतु संयुक्त राष्ट्र के इक्वेटर पुरस्कार के लिए निर्णायक मण्डल समिति द्वारा चयनित सूची में शामिल किया गया था। सी0सी0डी0 की यह सफल पहल बहुत से स्वैच्छिक संगठनों के लिए प्रेरणा का स्रोत है, जिससे उत्प्रेरित होकर अनेक सामुदायिक संगठन पर्यावरण सम्मत ग्रामीण उद्योगों को अपना रहे हैं। ■

निदेशक
कोवनेन्ट सेन्टर फार डेवलपमेण्ट (सी०सी०डी०)
नार्थ इण्डिया कार्यालय, फ्लैट 2-27, एस०टी०आर० काम्प्लेक्स
विश्वदीप स्कूल के पीछे
दुर्ग, छत्तीसगढ़-491001, फोन : 09424102440

Farmers as Entrepreneurs
LEISA INDIA, Vol. 11, No.2, Pg. # 27, June 2009

लीज़ा इण्डिया
क्षेत्रीय भाषाओं में

स्थानीय भाषा में अंक के लिए अपने पाठकों की बढ़ती मांग को देखते हुए हिन्दी, तमिल, कन्नड, तेलुगू व उड़िया में लीज़ा इण्डिया के अब पाँच भाषाई अंक निकाले जा रहे हैं। चुने हुए लेखों के अनुवाद से सुसज्जित ये क्षेत्रीय अंक साल में दो बार– जून और दिसम्बर में निकाले जा रहे हैं।

ये भाषाई अंक मुख्य तौर पर उन संस्थाओं और लोगों के लिए महत्वपूर्ण हैं, जो जमीनी स्तर पर काम कर रहे हैं और अपनी क्षेत्रीय भाषा में अधिक सुविधा महसूस करते हैं। जो लोग क्षेत्रीय भाषाओं की पत्रिका प्राप्त करना चाहते हैं, वे leisaindia@yahoo.co.in पर अपना पत्र–व्यवहार का पूर्ण पता देकर श्री अरूण कुमार शिवाराय से सम्पर्क कर सकते हैं।

वेबसाइट पर लीज़ा
www.leisaindia.org

लीज़ा गतिविधियों पर सीखने एवं अनुभव आदान– प्रदान हेतु एक वेबसाइट

मुख्य आकर्षण

- लीज़ा आधारित अनुभवों का बांटने की जगह
- किसानों द्वारा की जा रही लीज़ा गतिविधियों को जानने का एक स्रोत
- लीज़ा इण्डिया पत्रिकाओं का एक अभिलेख– अंग्रेजी व अन्य क्षेत्रीय अंक (तमिल, कन्नड़, हिन्दी, उड़िया और तेलगु)
- लीज़ा गतिविधियों से सम्बन्धित फोटो व वीडियो
- लोगों द्वारा अनुसरित लीज़ा गतिविधियों की सफल कहानियाँ

वैश्विक तापमान न्यूनीकरण के साथ स्थाई आजीविका

नारायण जी हेगड़े

पशुपालन खेती का एक महत्वपूर्ण और समग्रित भाग है, जो आज अत्यधिक उपेक्षित होकर कृषिगत क्षेत्र से पूर्णतया खत्म हो चुका है। कम उत्पादन, ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कमजोर योगदान और लघु किसानों की आजीविका को खत्म करना आदि पशुधन क्षेत्र की विशेषता बन गयी है। भारत के पास विश्व के पशुधन का 17 प्रतिशत मौजूद है, लेकिन उनके प्रदर्शन का विस्तार विकसित देशों में अपने काउण्टरपार्टस के बीच केवल 25–30 प्रतिशत ही है। भारत में पशुधन संख्या तो बढ़ रही है, परन्तु उनके नस्लीय विकास और चारा उत्पादन बढ़ाने के लिए कोई गम्भीर प्रयास नहीं किये जाने के कारण उनके खाने व चारे का गंभीर संकट उत्पन्न होता जा रहा है, जिससे भविष्य में उनकी उत्पादकता प्रभावित होगी।

इस बात पर भी विचार करना होगा कि घटते पशुधन के कारण बिगड़ते पर्यावरण व पारिस्थितिकी की वजह से बहुत से विकसित देशों के अस्तित्व पर संकट उत्पन्न हो रहा है। ऐसी स्थिति में जलवायु परिवर्तन के कारण आगे आने वाली नयी चुनौतियों और अनिश्चितताओं का सामना भी करना पड़ेगा। वातावरण में अत्यधिक कार्बन डाईआक्साइड उत्सर्जन करने वाले देशों में भारत अपनी विशाल जनसंख्या के कारण तीसरे स्थान पर खड़ा है। यहां पशुधन और उनके गोबर से उत्पन्न मिथेन व अन्य ग्रीन हाउस गैसें भारी मात्रा में उत्सर्जित होती हैं। मिथेन गैस, कार्बन डाई आक्साइड की तुलना में 23 गुना अधिक गर्मी आत्मसात कर सकने के कारण अधिक घातक होता है। इसलिए विश्व में विशालतम पशुधन संख्या रखने के कारण मिथेन का उत्सर्जन भारत के लिए चिन्ता का विषय है। फिर भी, भारत के 75 प्रतिशत से अधिक छोटे किसानों के लिए उनकी आजीविका के रूप में पशुधन आमदनी का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इन किसानों के लिए पशुधन के कारण पर्यावरण पर पड़ने वाले खतरों के बारे में सोचने से अधिक महत्वपूर्ण और प्राथमिक अपनी खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना है।

बीते वर्षों में, पोषक तत्वों से परिपूर्ण दूध, जुताई के लिए बैल एवं खाद के रूप में जानवरों ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था में उल्लेखनीय योगदान किया है। हाल के वर्षों में, आनुवांशिक उन्नति, समय पर स्वास्थ्य की देख–रेख और खाने के लिए संतुलित भोजन के लिए उचित तकनीकी सेवाओं के अभाव से मवेशियों एवं भैंसों की उत्पादकता में उल्लेखनीय कमी आई है। फिर भी अतिरिक्त आमदनी उपार्जन के लिए लघु किसानों का झुकाव पशुओं की संख्या बढ़ाने की ओर हुआ, जिससे उनके ऊपर चारा और भोजन संसाधनों की आपूर्ति का दबाव बढ़ा।

बाएफ के अनुभव यह दर्शाते हैं कि दुग्ध उत्पादन उन भूमिहीन और महिला प्रधान परिवारों के लिए भी एक लाभदायक स्वरोजगार उत्पन्न कर सकता है, जो दूसरे किसानों से चारा व फसल अवशेष खरीदती हैं। दुधारू नस्ल की गायों से मिली अधिक आमदनी से

अरबों की संख्या में छोटे किसानों को आजीविका उपलब्ध कराती बकरियाँ

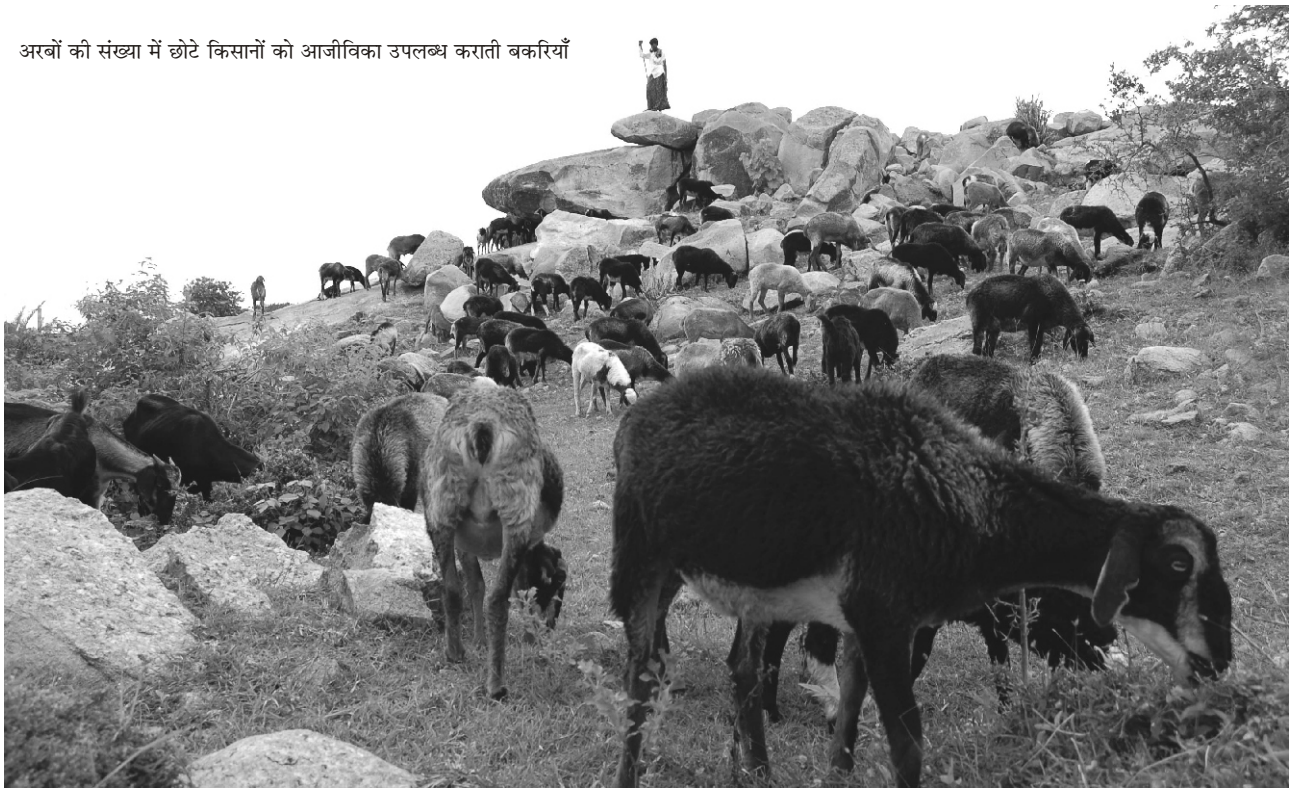

फोटो : एम० जयराज

उनको मजदूरी से छुटकारा मिला। इसी प्रकार अन्य मवेशियों व भैंसों का नस्ल सुधार करते हुए लघु किसान अपनी गरीबी को कम कर सकते हैं और कम संख्या में जानवर रखकर पर्यावरण संरक्षण और वैश्विक तापमान को घटाने में उल्लेखनीय योगदान कर सकते हैं। आज यह कार्यक्रम 12 राज्यों के 55000 गांवों में चल रहा है और इससे 30 लाख से भी अधिक गरीब परिवार लाभान्वित हो रहे हैं। अपने 30 करोड़ के सालाना बजट के साथ बाएफ कार्यक्रम दुग्ध उत्पादन को प्रोत्साहित करते हुए छोटे किसानों के माध्यम से रू0 2500 करोड़ सालाना की बचत कर सकने में सक्षम है। नस्ल सुधार के माध्यम से स्थानीय मवेशियों को उन्नत बनाने की प्रक्रिया को अब बहुत से राज्य सरकारों द्वारा अपनाया जा रहा है और इस कारण पूरे विश्व में दुग्ध उत्पादन में भारत सर्वोच्च श्रेणी में पहुंच गया है। ठीक इसी प्रकार बकरी पालन पारिस्थितिकी तंत्र के लिए एक खतरे के तौर पर है, परन्तु लघु किसानों द्वारा सावधानी के साथ पालते हुए जीवनयापन में मददगार हो सकता है। राजस्थान, गुजरात, पश्चिम बंगाल में बाएफ के अनुभव यह सिद्ध करते हैं कि लघु किसानों के बीच में पर्यावरण को बिना नुकसान पहुंचाए बकरी पालन को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

ग्रीन हाउस गैसों के न्यूनीकरण का अवसर

इस क्षेत्र में विशिष्ट कार्यक्रम चलाकर पशुधन के माध्यम से ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को घटाने के लिए अतिरिक्त प्रयास किया जा सकता है। इसमें पशुधन संख्या घटाना, पशुधन द्वारा मिथेन गैसों के उत्सर्जन को कम करना और मिथेन गैस के पुर्नचक्रीकरण द्वारा ऊर्जा की आवश्यकता को पूरा करने के प्रयास भी शामिल होने चाहिए। अनुत्पादक पशुओं की संख्या घटाने पर भी गंभीरता से विचार करना होगा, क्योंकि एक तो ये हमारे लिए कम मात्रा में उपलब्ध बहुमूल्य भोजन संसाधनों को खाते हैं दूसरी तरफ पर्यावरण और जैव विविधता के लिए भी नुकसानदायक होते हैं। किसानों के बीच कम उत्पादन देने वाले पशु रखने से होने वाले नुकसान पर भी जागरूकता लायी जानी चाहिए। एक किसान अपने नर या मादा दोनों ही प्रकार के अनुत्पादक जानवरों को हटाने में असुविधा महसूस करता है, जो पशुपालन हेतु एक गम्भीर समस्या है। गायें तो फिर भी नस्ल सुधारते हुए बच्चा उत्पादन के काम में आ जाती हैं, पर साड़ों का प्रबन्धन करना एक बड़ी समस्या होती है, क्योंकि लघु किसान भी बैलों की जगह ट्रैक्टर व पावर टिलर मशीन का प्रयोग खेती में करने लगे हैं। इसलिए, बड़ी संख्या में पारम्परिक नस्लों के संरक्षण, उनकी आर्थिकता और हमारे किसानों के लिए उनके उपयोग के साथ समझौता करने से पहले पशुधन नीति का एक गम्भीर पुनरावलोकन करना होगा।

यह आवश्यक है कि बैलों से चलने वाली नई मशीनों और यंत्रों के डिजाइन के माध्यम से ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत के तौर पर सांड़ के शक्ति के प्रयोग की आर्थिक उपादेयता तलाश की जाये। एकल बैल से खींचे जाने वाले कृषि कार्य, जल पम्पिंग तंत्र और घरों में प्रकाश के लिए ऊर्जा उत्पादन यंत्र का विकास करते हुए बैलों को आर्थिक रूप से लाभकारी बनाया जा सकता है। पशुधन क्षेत्र में वैश्विक तापमान न्यूनीकृत करने का दूसरा उपाय वातावरण में मिथेन गैस के उत्सर्जन को घटाना है। पशु विविध प्रकार के खानों को पचाने के बाद मिथेन उत्सर्जित करते हैं। अध्ययन यह प्रमाणित करते हैं कि फाइबर से समृद्ध कुछ भोजन तीव्र गति से मिथेन उत्सर्जित करते हैं। अतः इस प्रकार की अगली तकनीक विकसित होनी चाहिए कि जानवरों के खाने से पहले फाइबर युक्त भोजन छोटे–छोटे टुकड़े में काट दिया जाये, जिससे मिथेन गैस का उत्सर्जन कम हो। हाथ से, जैव रसायन से और सूक्ष्म जैव क्रियाओं द्वारा फाइबर को तोड़ने की यह प्रक्रिया संभवतः एकदम उपयुक्त और दुग्ध उत्पादन करने वाले किसानों के बीच प्रचलित भी है।

मिथेन गैस गोबर से निकलती है और जानवर रखने वाला प्रत्येक किसान बायोगैस उत्सर्जन करते हुए इसको रोक सकता है। वर्तमान में, घरों में खाना बनाने और प्रकाश के ऊर्जा के अन्य स्रोतों की कमी के बावजूद भी यह पहलू उपेक्षित है। खादी और ग्राम्य उद्योग द्वारा प्रोत्साहित की गयी बायोगैस की अलोकप्रियता का एक मुख्य कारण प्लाण्ट का खराब आकार जैसे – प्लाण्ट लगाने के लिए अत्यधिक जगह की आवश्यकता, उच्च पूंजी लागत एवं प्लाण्ट लगाने के बाद खराब सेवाएं और अन्य ईंधनों (मिट्टी के तेल, बिजली और बायोमॉस) पर मिलने वाले आकर्षक छूट आदि हैं। भविष्य में ऐसे शोध व विकास कार्यक्रम की आवश्यकता है, जो सघन बायोगैस प्लाण्ट को विकसित कर सके ताकि घरेलू अपशिष्टों, विशेषकर पशुओं के गोबर को जैविक रूप से अपघटित कर घरों के छत पर उसे लगाकर ऊर्जा का उत्पादन किया जा सके।

पशुओं को खाने के लिए ऐसे चारे के उत्पादन को प्राथमिकता दिया जाना चाहिए, जिसके द्वारा चारे की कमी को पूरा करने के साथ–साथ उच्च रेशेदार, मोटे चारे को खिलाने की बजाय उन्नत किस्म का और सुपाच्य चारा प्राप्त हो सके। अपघटित और शुष्क भूमि तथा रवाइन और क्षारीय भूमि को सुधार कर उस पर चारे वाले फसलों का विकास किया जाना चाहिए, जिससे न केवल चारे की आवश्यकता की पूर्ति होगी, वरन् ऐसे निम्न कोटि के भूमि पर हरीतिमा का विकास होने के साथ–साथ भूमिगत जल स्तर का पुनर्सभरण भी होगा। सम्प्रति कृषक वैश्विक तापवृद्धि का पशुधन पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों से अभी पूर्णतः अनभिज्ञ हैं। अतः एक सक्षम जागरूकता अभियान के चलाने की आवश्यकता है, जिसके द्वारा वे पारिस्थितिकी सम्मत क्रिया–कलाप को अपनाने के साथ–साथ इसके दुष्प्रभावों को भी कम कर सकें।

वास्तव में, भारत के लिए ऐसी रणनीति होनी चाहिए, जिससे पारिस्थितिकी सम्मत क्रिया–कलाप को बढ़ावा मिले, जो ताप परिवर्तन के प्रभावों को न्यूनीकरण करने में सहयोगी हो तथा गरीबों में सतत् जीवन निर्वाहन को पुष्ट करे। विकास कार्यक्रम, ऐसे प्रेरक रूप से होने चाहिए, जिससे सामान्य जन को तत्काल लाभ दिखाते हुए उनमें वे आसानी से अपनी सक्रिय भूमिका बना सकें। जब गरीब लोगों को विकास कार्यक्रमों में शामिल किया जाता है, तो आवश्यक है कि जब वे विकास कार्यक्रमों के लिए अपना सहयोग दे रहे हों, तो उसमें भाग लेने वाले लोगों को अपनी जीविका अर्जित करने की अपार संभावना हो।

■

ट्रस्टी और प्रमुख सलाहकार
बाएफ डेवलपमेन्ट रिसर्च फाउण्डेशन
एन०एच० नं०– 4
वार्जे, पुणे– 411058
ईमेल :nghegde@baif.org.in

Livestock for Sustainable Livelihoods
LEISA INDIA,Vol. 12, No.1, Pg. # 16-17, March 2010

पारम्परिक जलस्रोतों को समुदाय ने दिया पुर्नजीवन

बजीना गांव की महिलाओं ने जलस्रोतों का प्रबन्धन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। समुदाय ने यह महसूस किया है कि 'टेरी' के सहयोग से लोगों ने न केवल पेयजल तक अपनी पहुँच बढ़ाई है, वरन् लोगों के अन्दर जल स्रोतों के प्रबन्धन की जानकारी एवं क्षमता स्तर में भी वृद्धि हुई है।

राकेश प्रसाद

फोटो : लेखक

बजीना गाँव में जल स्रोत

उत्तराखण्ड में अल्मोड़ा जिले के बजीना गांव में पेयजल के मुख्य स्रोत पारम्परिक जल सोते हैं, जिन्हें स्थानीय भाषा में ''नाला'' कहते हैं। निरन्तर पेड़ों के कटने और अन्य विभिन्न कारणों से इस क्षेत्र में पेयजल की उपलब्धता पर भारी असर पड़ा है। नाले से आने वाला पानी ग्रामवासियों की पानी की मांग को पूरा कर पाने के लिए अब पर्याप्त नहीं रहा या वनों के अन्धाधुन्ध कटान से पारिस्थितिकी तंत्र बिगड़ गया है, जिसकी वजह से धरातलीय पानी तेजी से बह जा रहा है और जमीन में जल धारण की क्षमता में ह्रास हो रहा है। सिंचाई की कोई सुविधा न होने के कारण गांव में लगभग 90 प्रतिशत परिवारों की निर्भरता वर्षा आधारित खेती पर है। कम फसलोत्पादन और आमदनी का कोई दूसरा जरिया न होने के कारण पलायन यहां के लिए एक आम बात है।

इन स्थितियों को देखते हुए स्थानीय संस्था 'होप' के साथ संयोजन में एक स्वयंसेवी संगठन 'टेरी' ने क्षेत्र की परिस्थितियों का व्यवस्थित एवं विस्तृत अध्ययन किया। इन्होंने पाया कि जल प्रबन्धन मुद्दे पर महिलाओं के पास जानकारियों का भण्डार है। अध्ययन परिणामों को आधार बनाकर, जल संरक्षण कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार की गयी, जिसे महिलाओं की सहभागिता से क्रियान्वित किया गया। ये कार्यक्रम विभिन्न गांवों में चलाये गये।

समुदाय की जरूरतों की समझ बनाना

स्थानीय स्वयंसेवी संगठन की मदद से, मुख्य सूचनाकर्ताओं को चिन्हित कर गांव के बारे में प्रारम्भिक सूचनाएं एकत्र की गयीं। गांव से सम्बन्धित प्रमुख कार्यकर्ताओं को लेकर उनके साथ बैठकें आयोजित की गयीं। उनके साथ ग्रामस्तरीय विकास गतिविधियों और संभावित कार्यक्रम के ऊपर चर्चा की गयी। समुदाय के महत्वपूर्ण लोगों के साथ की गयी कुछ बैठकों ने गांव में विश्वास स्थापित करने में मदद की।

इसी के साथ सभी ग्रामवासियों के साथ भी बैठकें आयोजित होती रहीं, जिसमें महिला–पुरूष दोनों ही भाग लेते थे और चर्चा में बढ़–चढ़कर भागीदार होते थे। महिलाएं प्रतिदिन ऊर्जा और जल के मुद्दे को उठाती थीं। इन बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए यह तय किया गया कि स्थानीय सहयोग के साथ स्थानीय स्तर पर उपलब्ध तकनीकों को लेकर ऊर्जा और जल के मुद्दे पर ही काम किया जाये। चर्चा में शामिल लोगों ने आगे की विस्तृत कार्ययोजना बनाने में बहुत से सकारात्मक सुझाव दिये।

महिलाओं ने ऊर्जा और जल की परिस्थितियों पर विभिन्न विचार दिये, जिन्हें बाक्स के अन्तर्गत देखा जा सकता है। महिलाओं ने माना कि पहले जंगल गांव के काफी निकट थे और वे आसानी से जलावनी लकड़ी ले आ सकती थीं, लेकिन अब जंगल घट रहे हैं और उन्हें जलावनी लकड़ी एकत्र करने के लिए 3 किमी0 तक की चढ़ाई करनी पड़ती है। उनके अनुसार, जल सोतों से पानी घटते जाने का एक कारण जंगलों के कटने से होने वाला खालीपन भी है। खाली होते भूमिगत जलस्रोत वर्तमान में खाने–पीने के प्रबन्धन में होने वाली पानी की आवश्यकता को मात्र 15–20 प्रतिशत तक ही पूरा कर पाने में सक्षम हैं।

समुदाय को सक्रिय करना

नेतृत्व करने की क्षमता रखने वाली महिलाओं एवं पुरूषों को चिन्हित कर समुदाय को सक्रिय करने का काम किया गया। परियोजना के विषय में समुदाय को संवेदित करने लिए एक महिला और एक पुरूष को संदर्भ व्यक्ति के रूप में चयनित किया गया। साथ ही, परियोजना दल के द्वारा गांव में घर–घर जाकर लोगों के साथ सम्पर्क स्थापित किया गया।

क्रियान्वयन की प्रक्रिया शुरू करने से पहले गांवस्तरीय संस्थानों जैसे ग्राम्य पंचायत, वन पंचायत, युवा समूह और सहकारी समितियों को विश्वास में लिया गया। ग्राम स्तरीय विकासात्मक कार्यक्रमों में स्थानीय संस्थानों के तौर पर पंचायत एक मुख्य भूमिका निभाती है। अतः यह आवश्यक था कि अपनी परियोजना में इनको शामिल किया

गांव स्तर पर जल व ऊर्जा की स्थिति के मुद्दे पर हुई बैठक में महिलाओं की भागीदारी व स्थिति निरूपण

मापदण्ड	स्थिति
भूमिगत जल	खाली हो रहे
सतही जल की उपलब्धता	निम्न
वनों से आच्छादित वनभूमि	कम
मृदा उर्वरता	ह्रास
गांव में पेयजल स्रोत	अपर्याप्त
सिंचाई हेतु जल	अपर्याप्त
जलावनी लकड़ी की उपलब्धता	घट रही
फसल उत्पादन	ह्रास

जाय। सघन संवाद एवं आपसी मेल–जोल ने पंचायत सदस्यों को यह मौका दिया कि वे परियोजना की मजबूती एवं उसके साथ संभावित सहयोग को जान सकें। विभिन्न परिवारों के लिए किस प्रकार के ऊर्जा एवं जलस्रोत वा तकनीकों की आवश्यकता होगी एवं उनकी प्राथमिकता क्या होगी, पंचायत सदस्यों ने इसे भी समझने में मदद की।

अधिकांश लोगों, मुख्यतः महिलाओं के लिए सुविधाजनक समय पर ग्रामस्तरीय सामुदायिक बैठकें भी आयोजित की गयीं। इस बात के लिए प्रयास किया गया प्रत्येक घर से कम से कम एक व्यक्ति की सहभागिता सुनिश्चित हो। इन बैठकों से ऊर्जा और जल सम्बन्धित स्थितियों पर समुदाय की समझ बनाने में मदद मिली और तकनीकों के चयन, मूल्य में हिस्सेदारी और सहभागिता में समुदाय की रूचि बढ़ी।

प्राकृतिक संसाधनों की स्थिति और इसके प्रयोग पर महिलाओं की जानकारी एवं विचार जानने व स्थितियों का विश्लेषण करने के लिए समूह चर्चा भी आयोजित की गयी। उपरोक्त समस्याओं से निपटने में स्वयं सहायता समूहों के महत्व, प्राकृतिक संसाधनों के प्रबन्धन की गतिविधि एवं जल और ऊर्जा की स्थितियों पर महिलाओं के बीच जागरूकता फैलाने के उद्देश्य से बड़ी संख्या में बैठकें आयोजित की गयीं। आयजनक गतिविधियों और ऊर्जा स्रोतों के पुर्नचक्रण के बारे में भी महिलाएं अपनी क्षमता से परिचित हुईं। तकनीकी के साथ–साथ प्रबन्धकीय विषयों पर महिलाओं की दक्षता विकसित करने के उद्देश्य से प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये गये जिससे परियोजना से अन्य संस्थाओं के साथ सम्पर्क बनाने में मदद मिली।

क्रियान्वयन

स्थितियों को उन्नत बनाने के लिए संभव गतिविधियां क्या हो सकती हैं, इसे जानने के लिए विशेषज्ञों के साथ एक विस्तृत अध्ययन किया गया। गांव में भूमिगत जल की स्थितियों को समझने के लिए हर संभव स्थानों पर भ्रमण भी किया गया। नाले को पुनर्जीवित करने की संभावना खोजने के लिए वहां भी भ्रमण किया गया। कार्यस्थलों के भ्रमण के दौरान यह पाया गया कि क्रमशः जलस्तर कम होने के लिए जल स्रोत के पास स्थित बंजर जमीन भी उत्तरदायी कारण है। अपने निरीक्षण में विशेषज्ञों ने पाया कि जमीन 40 अंश (खड़ा ढाल) से अधिक ढालू है और 90 प्रतिशत तक वनभूमि जंगलों से विहीन हो चुकी है। इस स्थिति को देखते हुए पानी की दशा सुधारने के लिए एक मुख्य गतिविधि के तौर पर वृक्षारोपण को अपने कार्यक्रम में समाहित किया गया।

गांव के लोगों ने मानसून के महीनों में जंगल क्षेत्र में वृक्षारोपण करने का निश्चय किया। पूरी प्रक्रिया में ग्राम प्रधान ने सकारात्मक व उल्लेखनीय भूमिका निभाई। पूरे कार्यक्रम क्रियान्वयन की जिम्मेदारी ग्राम प्रधान को सौंपने के साथ उनके नेतृत्व में कार्यक्रम नियोजन, क्रियान्वयन, देख–रेख, संचालन और रख–रखाव में मदद हेतु समिति का गठन किया गया। समिति के सदस्यों को तकनीक के साथ–साथ प्रबन्धकीय पहलुओं पर भी प्रशिक्षित किया गया।

गतिविधियों में अंशदान करने के लिए गांव वाले सहमत भी हो गये और प्रत्येक परिवार रू0 200.00 अदा कर रहे हैं। मानसून के दौरान,

फोटो : लेखक

जल संरक्षण के तरीके

वन पंचायत ने जंगल एवं बंजर भूमि पर वृक्षारोपण किया और जलसोतों के ऊपरी स्थान पर 14 जल संरक्षण ढांचों व जल पुनर्सम्भरण तालाबों को बनाया गया। समुदाय के सदस्यों ने अपने घरों की रसोईघर में जलावनी लकड़ी के प्रयोग को घटाने तथा धुंएं का उर्त्सजन कम करने के लिए उन्नत चूल्हों का निर्माण किया अर्थात् धूमरहित चूल्हे का प्रयोग आरम्भ किया गया।

प्रभाव

वृक्षारोपण व जल संरक्षण गतिविधियों के कारण बारिश होने के दो महीने के बाद गांव में स्थित जलसोतों में पानी का संग्रहण बढ़ा है। इस छोटे से प्रयास के फलस्वरूप पानी की उपलब्धता तीन गुना तक बढ़ी है। इसके प्रभावों को गांव स्तर पर बहुत अच्छी तरह से देखा जा सकता है। पेयजल तक लोगों की पहुंच बढ़ी है। समुदाय के सभी वर्ग यह महसूस करने लगे हैं कि परियोजना की क्षमता वर्धक गतिविधियों से जुड़ने के पश्चात् उनकी जानकारियों एवं दक्षता में निखार आया है।

इस प्रयास को स्थानीय स्तर पर अच्छी मान्यता मिली है। स्थानीय समाचार पत्रों ने टेरी द्वारा किये गये इस छोटी पहल के बड़े प्रभाव को अपने अखबारों में प्रमुखता से स्थान दिया।

आभार

लेखक परियोजना के क्रियान्वयन में स्थानीय संस्था होप और बजीना गांववासियों द्वारा दिये गये उपयोगी सुझावों एवं सहयोग के लिए उनका आभार प्रकट करता है।

■

टेरी (द एनर्जी एण्ड रिसोर्सज इंस्टीट्यूट)
आई०एच०सी०, लोधी रोड
नई दिल्ली–11003
ईमेल : rakeshp@teri.res.in

Managing Water for Sustainable Farming
LEISA INDIA, Volume 12, No. 3, Pg # 14-15, Sept. 2010

छोटे स्तर पर जल संसाधनों का प्रबन्धन

स्थानीय समाधानों की पहचान करने में वहाँ रह रहे लोगों को शामिल करना स्थानीय जल सम्बन्धित समस्याओं के समाधान का एक बेहतर तरीका हो सकता है। ''मित्रा'' का अनुभव एक ऐसा ही उदाहरण है जहाँ समुदायों ने जल स्रोतों को विकसित करने का काम किया है और उनका बेहतर प्रबन्धन भी किया।

फोटो : लेखक

विकसित जल स्रोत

आर०सी० कोटे एवं एस०एम० वागले

नासिक जिले के पियेन्ट तालुक से 19 किमी0 दूर स्थित दोमाखादक गांव एक भूचाल व पर्वतीय भूदृश्य बाहुल्य स्थान है। यहां खरीफ में परम्परागत फसलें जैसे धान, नगली, बरई और कुलीड उगाई जाती हैं। वर्षा आधारित खेती पर निर्भर यहां के लोगों को वार्षिक वर्षा 2500 मिमी0 होने के बावजूद फसलों से कम उत्पादन मिलता है नतीजतन यहां के लोग रोजगार की तलाश में नासिक की ओर पलायन कर जाते हैं।

वर्ष 2001 में, समुदाय को खाद्य व आमदनी का एक स्थाई जरिया प्रदान करने के उद्देश्य से बाएफ, महाराष्ट्र के सहयोग से स्थानीय संस्था ''मित्रा'' ने वृक्ष आधारित खेती माडल (वाडी) को प्रोत्साहित किया। स्थानीय जनजाति के परिवारों ने 47 एकड़ के परिक्षेत्र में फलदार वृक्षों और वानिकी को बाड़े की तरह लगाया। हालांकि पर्वतीय स्थलाकृति और ढालू जमीन होने के कारण पानी न रूकने की वजह से पौधों को बड़ी मुश्किल से बचाया जा सका। इसे देखते हुए, लोगों को समस्या की गंभीरता समझाने तथा स्थानीय स्तर पर समाधान तलाश करने के लिए ''मित्रा '' ने सहभागी प्रक्रिया पी0आर0ए0 अपनाई। समुदाय ने उत्साहित होकर अपने जल संसाधनों का मानचित्रीकरण एवं परिवारों की पानी की आवश्यकता का विश्लेषण किया। समुदाय ने गांव में नये जलस्रोत स्थापना के साथ ही पहले से स्थापित जल स्रोतों के विकास के लिए ''मित्रा'' के निर्देशन में एक रणनीति विकसित की।

परियोजना संचालन के बाद नियोजन, समन्वयन, क्रियान्वयन एवं प्रबन्धन के लिए 7 सदस्यों को मिलाकर एक **''जल प्रयोग समूह''** का गठन किया गया। जल प्रयोग समूह की मुख्य जिम्मेदारी क्रियान्वयन गतिविधियों को सहयोग प्रदान करना और मानिटरिंग तथा चेक डैम व ढांचों की मरम्मत व देख–रेख था। वाडी–तकाडी सदस्यों ने नाला पर पक्का चेक डैम बनाने तथा दो जलसोतों को विकसित करने को प्राथमिकता दिया।

समूह सदस्यों ने चेक डैम के निर्माण के लिए ग्राम सभा में एक प्रस्ताव पास कराया। शुरूआत में यह तय किया गया था कि जल संग्रह का स्थाईत्व जाँचने के लिए बहाव के आर–पार बालू के बोरों से एक अस्थाई चेक डैम का निर्माण किया जाये। समुदाय ने खुद से एक अस्थाई अवरोध का निर्माण किया। इससे मिलने वाले अच्छे परिणामों को देखते हुए लोगों ने यह निश्चय किया गया कि एक पक्के चेक डैम का निर्माण किया जाये। चेक डैम बनने की इस

महाराष्ट्र में लगभग 95000 परिवारों के साथ काम कर रही मित्रा ने 62000 एकड़ भूमि को सिंचित बनाने में सहायता प्रदान की है। इसका प्रमुख प्रभाव यह रहा कि जनजातीय किसान अब अपने पारम्परिक फसलों के अतिरिक्त गेंहू, चना, प्याज और सब्ज़ियां भी उगाने लगे हैं। इसके परिणामस्वरूप उनके परिवार की वार्षिक आमदनी में रू0 10000–25000 तक की वृद्धि हुई है।

कार्यवाही में समिति के सभी सदस्य और वाडी से जुड़े लोगों की सहभागिता रही। जल प्रयोग समूह ने कुंए की आकार में दो जल सोतों को विकसित किया। पहाड़ी क्षेत्रों में जलसोतो को उनके द्वारा निकलने वाले पानी के अनुसार 3.0 मीटर व्यास वाले कुंए में परिवर्तित कर 2,000 से 3,000 लीटर वाले पेयजल के छोटे हौज की संरचना जैसे आकार में जोड़ दिया। कभी–कभी जलसोते ऊंचाई पर स्थित होते हैं। ऐसी स्थिति में, नीची जमीनों की सिंचाई अथवा पीने के लिए इन जलसोतों के पानी को पाइप के सहारे नीचे लाया जाता है।

सदस्यों का यह भी विश्वास है कि जल बचाने से हम इसका उपयोग सफलतापूर्वक कर सकेगें। एक समूह के तौर पर उन्होंने यह भी नियोजन किया कि पानी की उपलब्धता के आधार पर कौन सी फसल उगाई जाये। अभी सदस्य अधिक पानी चाहने वाली फसलों को उगाने पर सहमत नहीं हैं और उन्होंने ऐसी फसलों जैसे गन्ना आदि को उगाना पूर्णतया प्रतिबंधित कर दिया है। परिणामस्वरूप आज, किसान रबी मौसम में गेंहूं, चना और सब्ज़ियां जैसे – आलू, बैगन, टमाटर आदि उगाने में सक्षम हो चुके हैं।

वाडी (जल संग्रहण ढांचे) से जुड़े 9 लोगों की लगभग 14 एकड़ जमीन को सिंचित बनाकर लाभान्वित किया गया। इससे यहां धान का उत्पादन बढ़ा है। जल की उपलब्धता सुनिश्चित करते हुए प्रत्येक वाडी परिवार ने वाडी से अपनी आमदनी में रू0 20,000.00 की बढ़ोत्तरी करने के साथ अन्य फसलों से रू0 8,000.00 की अतिरिक्त आमदनी प्राप्त की है।

आभार

उपरोक्त लेख लिखने के दौरान श्री एस0के0 महाजन व श्री चेतन पोटाले द्वारा दिये गये योगदान के लिए हम उनके आभारी हैं।

बाएफ डेवलपमेन्ट रिसर्च फाउण्डेशन, पुणे

ईमेल : kote009@rediffmail.com, smwagle@rediffmail.com

Managing water for sustainable farming

LEISA INDIA, Volume 12, No. 3, Pg # 30, Sept. 2010